"आर्य्य-साहित्य-विभाग-ग्रंथमाला"

सम्पादक—

वाचस्पतिः एम० ए०

ग्रन्थांक १

प्रकाशक—

अध्यक्ष 'आर्य साहित्य विभाग'

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, लाहौर

मुद्रक—

श्री देवचन्द्र विशारद

हिन्दी भवन प्रेस, अनारकली, लाहौर

ओम्

द्वितीय संस्करण की भूमिका

ऋग्वेद शतक 'आर्य साहित्य विभाग' ग्रन्थ-माला की प्रथम भेंट है। इस ग्रन्थमाला को आर्य जनता ने इतना अपनाया है कि शीघ्र ही इन ग्रन्थों के नये संस्करण प्रकाशित करने पड़ रहे हैं। इस के लिये हम जनता का धन्यवाद करते हैं।

पूज्य श्री स्वामी अच्युतानन्द जी महाराज ने इन शतकों को लिख कर आर्य जनता का बड़ा उपकार किया है। आर्य समाज के नियम में आदेश है—

"वेद का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना परम धर्म है।"

श्री स्वामी जी महाराज ने इन गुटकों को लिखकर और 'आर्य साहित्य विभाग' ने इन को छपवाकर और इतना कम मूल्य रख कर इस आदेश का पालन सब आर्यों के लिये सुगम कर दिया है।

प्रथम संस्करण में इस ग्रन्थ में एक मन्त्र दो बार छप गया था, अब उन में से एक स्थान पर दूसरा मन्त्र डाल दिया गया है। मन्त्रों के छपने में कुछ अशुद्धियां थीं, वह भी ठीक कर दी गई हैं। यह संस्करण पहले से अधिक सुन्दर छपवाया गया है। इतनी विशेषताओं के होते हुए भी मूल्य पहले से भी कम कर दिया गया है। इस लिये मैं आशा करता हूँ कि आर्य जनता इस ग्रन्थ को पहले से भी अधिक अपनायेगी।

आश्विन १०९
दयानन्दाब्द

निवेदक
वाचस्पति सम्पादक
अध्यक्ष 'आर्य साहित्य विभाग'

प्रथम संस्करण का निवेदनांश

चिरकाल से यह धारणा हो रही थी कि आर्य्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के प्रथम उद्देश्य की पूर्ति

के लिये सभा की ओर से धर्म सम्बन्धी साहित्य का एक विभाग नियम पूर्वक स्थापित किया जाय, ताकि इस 'आर्य्य साहित्य विभाग' की ओर से वैदिक सिद्धान्तों की पुष्टि में उपयोगी ग्रन्थ प्रकाशित किये जाएं और साथ ही उन आक्षेपों के उत्तर भी दिये जाएं जो विरोधियों की ओर से आर्य्य सिद्धान्तों पर किये जाते हैं। अब ईश्वरकृपा से सभा ने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये इस कार्य का भार पण्डित वाचस्पति जी एम.ए.बी.एस.सी. विद्यावाचस्पति को सौंप दिया है।

इस वैदिक वाटिका का यह पहला ही उपहार आपके सामने आ रहा है। श्री १०८स्वामी अच्युतानन्द जी महाराज ने इन १०० पुष्पों को चुना है। मुझे पूर्ण आशा है कि आर्य्य जनता इस विभाग की ओर से प्रकाशित ग्रन्थों का आदर और प्रचार करके वेद प्रचार में हमारी सहायता करेगी।

१ वैशाख १९८९ दयानन्दाब्द १०८ — खुशहालचन्द, मन्त्री सभा

मन्त्रसूची

॥ ओ३म् ॥

ऋग्वेदशतकम्

अ॒ग्निमी॑ळे पु॒रोहि॑तं य॒ज्ञस्य॑ दे॒वमृ॒त्विज॑म् ।
होता॑रं रत्न॒धात॑मम् ॥१॥ १।१।१॥*

पदार्थ—(अग्निम्) ज्ञानस्वरूप, व्यापक, सब के अग्रणीय नेता और पूज्य परमात्मा की मैं (ईडे) स्तुति करता हूँ। कैसा है वह परमेश्वर? (पुरोहितम्) जो सब के सामने स्थित, उत्पत्ति से पूर्व परमाणु आदि जगत् का धारण

* इन तीनों अङ्कों से तात्पर्य मण्डल, सूक्त और मन्त्र है। (सम्पादक)

करने वाला (यज्ञस्य देवम्) यज्ञादि उत्तम कर्मों का प्रकाशक, (ऋत्विजम्) वसन्त आदि सब ऋतुओं का उत्पादक और सब ऋतुओं में पूजनीय, (होतारम्) सब सुखों का दाता तथा प्रलयकाल में सब पदार्थों का ग्रहण करनेवाला (रत्नधातमम्) सूर्य चन्द्रमा आदि रमणीय पदार्थों का धारक और सुन्दर मोती, हीरा, सुवर्ण रजत आदि पदार्थों का अपने भक्तों को देनेवाला है।

भावार्थ—ज्ञानस्वरूप परमात्मा सर्वत्र व्यापक, सब प्रकार के यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों का प्रकाशक और उपदेशक, सब ऋतुओं में पूजनीय और सब ऋतुओं का बनाने वाला, सब सुखों का दाता, और सब ब्रह्माण्डों का कर्त्ता धर्त्ता और हर्त्ता है, हम सब को ऐसे

प्रभु की ही उपासना, प्रार्थना और स्तुति करनी चाहिये ॥१॥

अग्निः पूर्वेभिर्ऋषिभिरीड्यो नूतनैरुत ।
स देवाँ एह वक्षति ॥२॥ १।१।२॥

पदार्थ—(अग्निः) परमेश्वर (पूर्वेभिः ऋषिभिः) प्राचीन ऋषियों से (उत) और (नूतनैः) नवीनों से (ईड्यः) स्तुति करने योग्य है। (स) वह (देवान्) देवताओं को (इह) इस संसार में (आ वक्षति) प्राप्त करता है।

भावार्थ—पूर्व कल्पों में जो वेदार्थ को जानने वाले महर्षि हो गये हैं और जो ब्रह्मचर्यादि साधनों से युक्त नवीन महापुरुष हैं, इन सब से वह पूज्य परमात्मा ही स्तुति

करने योग्य है। उस दयालु प्रभु ने ही इस संसार में दिव्य शक्ति वाले, वायु, अग्नि, सूर्य, चन्द्र, और बिजली आदि देव और हमारे शरीरों में भी विद्यादि सद्गुण, मन, नेत्र, श्रोत्र, घ्राणादि देव प्राप्त किये हैं। जिन देवों की सहायता से हम अपना लोक और पर-लोक सुधारते हुए, अपने मनुष्य जन्म को सफल कर सकते हैं ॥२॥

अग्निना रयिमश्नवत् पोषमेव दिवेदिवे।
यशसं वीरवत्तमम् ॥३॥ १।१।३॥

पदार्थ—(अग्निना एव) परमात्मा की कृपा से ही पुरुष (रयिम्) धन को (अश्नवत्) प्राप्त होता है। जो धन (दिवे दिवे पोषम्) दिन दिन में बढ़ने वाला है (यश

सम्) कीर्ति दाता और (वीरवत्तमम्) जिस धन में अत्यन्त विद्वान् और शूरवीर पुरुष विद्यमान हैं ।

भावार्थ—परमेश्वर की उपासना करने से और उसकी वैदिक आज्ञा में रहने से ही मनुष्य, ऐसे उत्तम धन को प्राप्त होता है कि, जो धन प्रतिदिन बढ़ने वाला, मनुष्य की पुष्टि करने वाला और यश देने वाला हो। जिस धन से पुरुष, महाविद्वान् शूरवीरों से युक्त होकर, सदा अनेक प्रकार के सुखों से युक्त होता है, ऐसे धन की प्राप्ति के लिये भी उन भगवान् की भक्ति करनी चाहिये ॥३॥

अग्ने॒ यं य॒ज्ञम॑ध्व॒रं वि॒श्वतः॑ परि॒भूरसि॑ ।
स इद्दे॒वेषु॑ गच्छति ॥४॥ १।१।४॥

पदार्थ—(अग्ने) हे परमेश्वर ! (यम् अध्वरम् यज्ञम्) आप जिस हिंसारहित यज्ञ के विश्वतः सर्वत्र व्याप्त होकर (परिभूः) सब प्रकार से पालन करने वाले (असि) हैं, (स इत्) वही यज्ञ (देवेषु) विद्वानों के बीच में (गच्छति) फैल जाता है ।

भावार्थ—धर्म रक्षक परमात्मा, जिस हिंसादि दोपरहित स्वाध्याय और अन्न, वस्त्र, पुस्तक विद्यादानादि यज्ञ की रक्षा करते हैं; वही यज्ञ संसार में फैल कर सब को सुखी करता है । इस वैदिक उपदेश से निश्चय हुआ कि जो हिंसक लोग, गौ, घोड़ा, बकरी आदि उपकारक और अहिंसक पशुओं को मार कर, उन की चर्बी और मांस से यज्ञ का नाम लेकर होम करते वा खाते हैं, यह

सब उन हत्यारे याज्ञिक लोगों की स्वकपोल-कल्पित लीला है, वेदों से इसका कुछ भी सम्बन्ध नहीं है ॥४॥

अग्निर्होता कविक्रतुः सत्यश्चित्रश्रवस्तमः ।
देवो देवेभिरागमत् ॥५॥ १।१।५॥

पदार्थ—(अग्निः) परमेश्वर (होता) दाता (कविः) सर्वज्ञ (क्रतुः) सब जगत् का कर्त्ता (सत्यः) अविनाशी और सदाचारी विद्वान् जनों का हितकारी (चित्रश्रवस्तमः) जिसका अति आश्चर्य रूपी श्रवण है, वही प्रभुः (देवः) उत्तमगुणों का प्रकाश करने वाला (देवेभिः) महात्मा विद्वानों का सत्संग करने से (आगमत्) जाना जाता तथा प्राप्त होता है ।

भावार्थ—सर्वज्ञ, सर्वान्तर्यामी, सब जगत् का कर्त्ता, भक्तों को सुख का दाता और हितकर्त्ता है। जिस का श्रवण विना पूर्व पुण्यों के नहीं मिल सकता, उस प्रभु का ज्ञान और प्राप्ति महात्मा विद्वान् सन्त जनों के सत्संग से ही होती है। संसार में जितने महापुरुष हुए हैं वे सब अपने महात्मा गुरुओं की सेवा और उनके सत्संग से भक्त और ज्ञानी व पूजनीय बन गए। सत्संग की महिमा अपार है, लिखी और कही नहीं जा सकती ॥ ५ ॥

यदुङ्ग दाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि।
तवेत्तत् सत्यमङ्गिरः ॥ ६ ॥ १।१।६॥

पदार्थ—(अङ्ग अग्ने) हे सब के प्रिय

मित्र अग्ने ! (यत् दाशुषे) जिस हेतु से उत्तम २ पदार्थों के दाता पुरुष के लिये (भद्रं करिष्यसि) आप कल्याण करते हैं। (अंगिरः) हे अन्तर्यामी रूप से अंगों की रक्षा करने वाले परमात्मन्! (तव इत्) यह आपका ही (तत् सत्यम्) सत्य व्रत शील स्वभाव है ।

भावार्थ—हे सब की रक्षा करने वाले, सब के सच्चे मित्र परमात्मन्! जो धार्मिक उदार, पुरुष, अन्न, वस्त्र, भूमि स्वर्ण, रजतादि उत्तम पदार्थों का सच्चे पात्र विद्वान् महापुरुषों को प्रेम से दान करते हैं, उन धर्मात्माओं की आप सदा रक्षा करते हैं। ऐसा आपका अटल नियम और स्वभाव ही है ॥ ६ ॥

उप त्वाग्ने दिवेदिवे दोषावस्तर्धिया वयम् ।
नमो भरन्त एमसि ॥ ७ ॥ १।१।७॥

पदार्थ—(अग्ने) हे परमेश्वर ! (दिवे दिवे) सब दिनों में (धिया) अपनी बुद्धि और कर्मों से (वयम्) हम उपासक जन (नमः) नम्रता पूर्वक आप को नमस्कार आदि (भरन्तः) धारण करते हुए (त्वा) आपके (उप) समीप (आ-इमसि) प्राप्त होते हैं (दोषा) रात्रि में और (वस्तः) दिन के समय में ।

भावार्थ—हे सब के उपासनीय प्रभो ! हम सब 'ओ३म्' नाम जो आपका मुख्य नाम है इससे और गायत्री आदि वेदों के पवित्र मन्त्रों से आपकी स्तुति, प्रार्थना, उपा-

मना सदा करें। यदि सदा न हो सके तो, सायंकाल और प्रातःकाल में आप जगत्पिता के गुण संकीर्त्तन रूपी स्तुति वांछित मोक्षादि वर की याचना रूप प्रार्थना, और आपके ध्यान रूप उपासना में अवश्य मन को लगाएं जिससे हम सब का कल्याण हो ॥७॥

राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिवम्।
वर्धमानं स्वे दमे ॥ ८ ॥ ।१।१।८॥

पदार्थ—(राजन्तम्) प्रकाशमान (अध्वराणाम्) यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों का वा धार्मिक पुरुषों का और पृथ्वी आदि लोकों का (गोपाम्) रक्षक (ऋतस्य) सत्यका (दीदिवम्) प्रकाशक (वर्द्धमानम्) सब से बड़ा (स्वे दमे) अपने उस परमानन्द पद में,

जिसमें कि सब दुःखों से छूटकर मोक्ष सुख को प्राप्त हुए पुरुष रमण करते हैं, उसमें सदा विराजमान हैं ऐसे प्रभु को हम प्राप्त होते हैं।

भावार्थ—परमात्मा प्रकाशस्वरूप, यज्ञादि उत्तम कर्मों के करने वाले, धर्मात्मा ज्ञानी पुरुषों की, तथा पृथ्वी आदि लोक लोकान्तरों की रक्षा करने वाले हैं, और अपने दिव्य धाम जो सब दुःखों से रहित है उसी में वर्त्तमान हैं। ऐसे सर्वज्ञ सर्वान्तर्यामी परमात्मा की ही बड़े प्रेम से हम सब को भक्ति प्रार्थना व उपासना करनी चाहिये ॥ ८ ॥

स नः॑ पि॒तेव॑ सू॒नवेऽग्ने॑ सूपाय॒नो भ॑व।
सच॑स्वा नः स्व॒स्तये॑ ॥ ९ ॥ १।१।९॥

पदार्थ—(अग्ने) ज्ञानस्वरूप, ज्ञानप्रद

पिता (सः) लोक और वेदों में प्रसिद्ध आप (सूनवे पिता इव) पुत्र के लिये पिता जैसा हितकारक होता है वैसे ही (नः) हमारे लिये (सु-उपायनः) सुखदायक पदार्थों की प्राप्ति कराने वाले ज्ञान के दाता (भव) होओ और (नः) हम लोगों के (स्वस्तये) कल्याण के लिये (सचस्व) प्राप्त होओ।

भावार्थ—जैसे पुत्र के लिये पिता हितकारी होता है और सदा यही चाहता है कि, मेरा पुत्र धर्मात्मा चिरंजीवी, धनी, प्रतापी, यशस्वी, सुखी और बड़ा ज्ञानी हो। वैसे ही आप परम पिता परमात्मा चाहते हैं कि, हम भी जो आपके पुत्र हैं धर्मात्मा, चिरंजीव, धनी, प्रतापी, और महाविद्वान् होकर लोक परलोक में सदा सुखी होवें ॥ ९ ॥

सारांश—ऋग्वेद के इस प्रथम अग्निसूक्त में परमेश्वर के गुणों का वर्णन किया गया है, और परमेश्वर ने मनुष्यों को उपदेश दिया है कि, उनको अपने कल्याणार्थ किस प्रकार उसकी स्तुति प्रार्थना और उपासना करनी चाहिये। जो व्यक्ति या व्यक्तिसमूह, परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना करेगा उसका अवश्यमेव कल्याण होगा, ऐसा स्पष्ट सिद्ध है॥

वायवायाहि दर्शतेमे सोमा अरंकृताः।
तेषां पाहि श्रुधी हवम् ॥१०॥ १।२।१॥

पदार्थ—(वायो) हे अनन्त बल युक्त सब के प्राणरूप अन्तर्यामी जगदीश्वर! (आयाहि) आप हमारे हृदय में प्रकाशित

होवें (दर्शत) हे ज्ञान से देखने योग्य! (इमे सोमाः) यह संसार के सब पदार्थ जो आपने (अरंकृताः) सुशोभित किये हैं (तेपाम् पाहि) इनकी रक्षा करें (हवम्) हमारी स्तुति को (श्रुधी) सुनिये।

भावार्थ—हे अनन्त बल युक्त सब के जीवन दाता दर्शनीय परमात्मन्! आप अपनी कृपा से हमारे हृदय में प्रकाशित होवें और जो उत्तम २ पदार्थ आपने रचे और हमको दिये हैं, उनकी रक्षा भी आप करें। हमारी इस नम्रता युक्त प्रार्थना को कृपा करके सुनें और स्वीकार करें ॥१०॥

त्वांस्तोमा॑ अवीवृधन् त्वामु॒क्था श॑तक्रतो।
त्वां व॑र्धन्तु नो॒ गिरः॑ ॥११॥ १।५।८॥

पदार्थ—हे (शतक्रतो) सृष्टि निर्माण पालन पोषणादि असंख्यात कर्म-कर्त्ता और अनन्त ज्ञानस्वरूप प्रभो ! जैसे (स्तोमाः) वेद के स्तोत्र तथा (उक्था) पठन करने योग्य वेदस्थ प्रशंसनीय सब मन्त्र (त्वाम्) आपको (अवीवृधन्) अत्यन्त प्रसिद्ध करते हैं, वैसे ही (नः) हमारी (गिरः) विद्या और सत्य भाषण युक्त वाणियें भी (त्वाम्) आपको (वर्धन्तु) प्रकाशित करें।

भावार्थ—हे सर्वशक्तिमन् जगदीश्वर पिता जी ! सर्व वेद साक्षात् और परम्परा से आपकी महिमा को कथन कर रहे हैं। हम पर कृपा करो कि हम सब आपके पुत्रों की वाणियां भी, आपके निर्मल यश को गाया करें, जिससे हम सब का कल्याण हो ॥११॥

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव ।
यद्भद्रं तन्न आसुव ॥१२॥ ५।८२।५॥

पदार्थ—हे (सवितः) सकल जगत् के उत्पादक (देव) ज्ञान स्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर ! (नः) हमारे (विश्वानि) सम्पूर्ण (दुरितानि) दुर्गुण, दुर्व्यसन, दुःख और पापों को (परासुव) दूर करें (यद्) जो (भद्रम्) कल्याण कारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं (तत्) वह सब हमको (आसुव) प्राप्त करावें ।

भावार्थ—हे सकल जगत् के कर्त्ता परमात्मन् ! कृपा करके आप. हमारे सब दुःख और दुःखों के कारण सब पापों को दूर कर दें । भगवन् ! कल्याण कारक जो अच्छे

गुण कर्म ज्ञान उपासनादि उत्तम २ पदार्थ हैं, उन सव को प्राप्त करा दें, जिससे हम सच्चे धार्मिक तेरे ज्ञानी और उपासक वन कर अपने मनुष्य जन्म को सफल करें ॥१२॥

विभक्तारं हवामहे वसोश्चित्रस्य राधसः ।
सवितारं नृचक्षसम् ॥१३॥ १।२२।७॥

पदार्थ—(वसो) सुखों के निवास हेतु (चित्रस्य) आश्चर्यस्वरूप (राधसः) धन को (विभक्तारम्) वांटने हारे (सवितारम्) सव के उत्पादक (नृचक्षसम्) मनुष्यों के सव कर्मों को देखने हारे परमेश्वर की हम सव लोग (हवामहे) प्रशंसा करें ।

भावार्थ—सर्वज्ञ सर्वान्तर्यामी परमेश्वर, सब मनुष्यों को उनके कर्मों के अनुसार

अनेक प्रकार का धन देता है, जिस धन से मनुष्य अपने लोक परलोक को सुधार सकते हैं, ऐसे धन को मद्य मांस सेवन और व्यभिचारादि पाप कर्मों में कभी नहीं लगाना चाहिये, किन्तु धार्मिक कामों में ही खर्च करना चाहिये, जिससे मनुष्य का यह लोक और परलोक सुधर सके ॥१३॥

सखा॑य॒ आ नि षी॑दत सवि॒ता स्तोम्यो॒ नु नः॑ ।
दाता॒ राधां॑सि शुम्भति ॥१४॥ १।२२।८॥

पदार्थ—(सखायः) हे मित्रो ! (आ निषीदत) चारों ओर से आकर इकट्ठे बैठो (सविता) सकल ऐश्वर्ययुक्त, जगत्कर्त्ता जगदीश्वर (स्तोम्यः) स्तुति करने योग्य है (नु) शीघ्र (नः) हमारे लिये (दाता)

दानशील है (राधांसि) धनों का (शुम्भति) शोभा देने वाला और शोभा युक्त है।

भावार्थ—मनुष्यों को परस्पर मित्रता के विना कभी कोई सुख नहीं प्राप्त हो सकता, इसलिये सब मनुष्यों को योग्य है कि, एक दूसरे के मित्र होकर इकट्ठे बैठें और उस जगत्पिता के गुण गावें, क्योंकि वही जगदीश्वर, सब को अनेक प्रकार के उत्तम से उत्तम धनों का दाता और शोभा का भी देने वाला है। इससे हमें उस दयामय पिता की सदा प्रेम से भक्ति करनी चाहिये, जिससे हमारा लोक और परलोक सुधरे ॥१४॥

आ वि॒श्वदे॑वं॒ सत्प॑तिं सू॒क्तैर॒द्या वृ॑णीमहे।
स॒त्यस॑वं सवि॒तार॑म् ॥१५॥ ५।८२।७॥

पदार्थ—(अद्य) आज (विश्वदेवम्) सब के उपास्यदेव (सत्यसवम्) सत्य के पक्षपाती (सवितारम्) जगत् के उत्पादक प्रभु को (सूक्तैः) सुन्दर स्तुति वचनों से (आवृणीमहे) भजते हैं।

भावार्थ—जगत् का उपास्य देव जो श्रेष्ठ सन्त जनों का रक्षक वा पालक, सच्चाई का पक्षपाती, जिस की आज्ञा सच्ची है, और जो सारे जगतों का उत्पन्न करने वाला है, आज हम अनेक वेद के पवित्र मन्त्रों से उस जगत्पिता की स्तुति करते हैं, वह जगत्पति परमात्मा, हम पर प्रसन्न होकर हमें सच्चा भक्त बनावे॥१९

सविता पश्चात्तात् सविता पुरस्तात्
सवितोत्तरात्तात् सविताधरात्तात् ।

सविता नः सुवतु सर्वतातिं सविता नो रासतां दीर्घमायुः ॥१६॥ १०।३६।१४॥

पदार्थ—(सविता) सब जगत् का उत्पादक देव (पश्चात्तात्) पीछे (सविता पुरस्तात्) सविता सम्मुख (सविता उत्तरात्तात्) सविता उत्तर दिशा (सविता अधरात्तात्) नीचे व दक्षिण दिशा में भी हमारी रक्षा करे। (सविता) सविता (नः) हमें (सर्वतातिम्) सब इष्ट पदार्थ (सुवतु) देवे (सविता) वही (सविता) जगत्पिता (नः) हमें (दीर्घम् आयुः) लम्बी आयु (रासताम्) प्रदान करे।

भावार्थ—जगत् पिता परमात्मा, पूर्वादि सब दिशाओं में हमारी रक्षा करे और हमें

मनोवांछित पदार्थ देता हुआ दीर्घ आयु वाला बनावे। जिस से हम धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चार पुरुषार्थों को प्राप्त होकर सदा सुखी हों ॥१६॥

सुवीरं॑ र॒यिमाभ॑र॒ जात॑वेदो॒ विच॑र्षणे।
ज॒हि रक्षां॑सि सुक्रतो ॥१७॥६।६।२९॥

पदार्थ—हे (जातवेदः) वेद प्रकट करने वाले प्रभो अथवा अनेक प्रकार का धन उत्पन्न कर्त्ता ईश्वर! (सुवीरम्) उत्तम वीरों से युक्त (रयिम्) धन को (आभर) दो (विचर्षणे) हे सर्वज्ञ सर्व द्रष्टा परमात्मन्! (सुक्रतो) हे जगत् उत्पादन पालनादि उत्तम और दिव्य कर्म करनेवाले प्रभो! (रक्षांसि) दुष्ट राक्षसों का (जहि) नाश कर।

भावार्थ—हे परमात्मन्! दानवीर कर्मवीरादि पुरुषों से युक्त धन हमें प्रदान करो। हम दीन मलीन पराधीन दरिद्री कभी न हों। हे महासमर्थ प्रभो! दुष्ट राक्षसों का दुष्ट स्वभाव छुड़ाकर, उनको धर्मात्मा श्रेष्ठ बनाओ, जिससे वे लोग भी किसी की कभी हानि न कर सकें ॥ १७ ॥

उपह्वरे गिरीणां संगथे च नदीनाम्।
धिया विप्रो अजायत ॥१८॥८।६।२८॥

पदार्थ—(गिरीणाम्) पर्वतों की (उपह्वरे) गुफाओं में (नदीनां संगथे च) और नदियों के संगम पर (धिया) ध्यान करने से (विप्रः अजायत) मेधावी व ब्राह्मण हो जाता है।

भावार्थ—मोक्षार्थी पुरुष को चाहिये कि वह एकान्त देश में जैसे पर्वतों की गुफा में व नदियों के संगम पर बैठ कर परमात्मा का ध्यान करे और एकान्त देश में ही वेदों के पवित्र मन्त्रों का विचार करे। तब ही वह विप्र और ब्राह्मण कहलाने के योग्य है। ब्राह्मण शब्द का यही अर्थ है कि ब्रह्म जो शब्द ब्रह्म वेद है, इसके पठन और विचार आदि से ब्राह्मण होता है, और ब्रह्म अविनाशी सर्वत्र व्यापक परमात्मा का जो ज्ञानी भक्त है वही ब्राह्मण कहलाने योग्य है। इसी ज्ञानी को विप्र भी कहते हैं, ऐसे वेदवेत्ता प्रभु के अनन्य भक्त ही ब्राह्मण होने चाहियें, न कि रसोई बनाने वाले व बनियों की वृत्ति करने वाले ॥१८॥

भूरिदा भूरि देहि नो मा दभ्रं भूर्याभर ।
भूरि घेदिन्द्र दित्ससि ॥१९॥४।३२।२०॥

पदार्थ—हे (इन्द्र) परमैश्वर्ययुक्त प्रभो ! आप (भूरिदा) बहुत देने वाले हो (नः) हमें (भूरि देहि) बहुत दो (मा दभ्रम्) थोड़ा नहीं, (भूरि आभर) बहुत लाओ। (इत्) निश्चित (भूरिधा) सदा बहुत (दित्ससि) देने की इच्छा करते हो।

भावार्थ—हे सर्वऐश्वर्य के स्वामी परमात्मन् ! आप अपने सेवकों को बहुत ही धनादि पदार्थ देते हो, हमें भी बहुत दो, थोड़ा नहीं, क्योंकि आपका स्वभाव ही बहुत देने का है, सदा बहुत देने की इच्छा करते हो। भगवन् ! धनादि पदार्थों को

प्राप्त होकर, उनको अच्छे कामों में हम लगावें, बुरे कामों में नहीं, ऐसी ही आपकी प्रेरणा हो। हम धर्मात्मा और धनी ज्ञानी बन कर आपके ज्ञान और धर्म के फैलाने वाले बनें, जिससे कि हम सब का कल्याण हो ॥ १९ ॥

भूरिदा ह्यसि श्रुतः पुरुत्रा शूर वृत्रहन्।
आ नो भजस्व राधसि ॥२०॥ ४।३२।२१॥

पदार्थ—हे (शूर) महाबलवान् प्रभो! हे (वृत्रहन्) अज्ञान नाशक परमेश्वर! (हि) निश्चय आप (पुरुत्रा भूरिदाः) सर्वत्र बहुत देने वाले (श्रुत असि) सुने गये हैं। (नः) हमें (राधसि) धन में (आ भजस्व) सब ओर से भागी बनाओ।

भावार्थ—हे अज्ञाननाशक महा पराक्रमी प्रभो! वेदादि सच्छास्त्र और इनके ज्ञाता महानुभाव महात्मा लोग, आपको सदा बहुत देने वाला बता रहे हैं। यह निश्चित है कि जो जो पदार्थ आपने हमें दिये हैं और दे रहे हैं वे अनन्त हैं। हम याचक हैं आप महादानी हैं अतएव हम आप से वारंवार माँगते हैं। भगवन्! आप हमें धन दो, बल दो, ज्ञान दो, आयु दो, सुबुद्धि दो, शान्ति दो, सुख दो, मुक्ति दो ॥२०॥

इन्द्रं॑ वर्ध॑न्तो अ॒प्तुर॒: कृ॒ण्वन्तो॒ विश्व॒मार्य॑म्।
अ॒प॒घ्नन्तो॒ अरा॑व्णः ॥२१॥ ९।६३।५॥

पदार्थ—(इन्द्रम्) परमेश्वर की (वर्धन्तः) बड़ाई करते हुए (अप्तुरः) श्रेष्ठ कर्म करते

हुए (विश्वम्) सबको (आर्यम्) वेदानुकूल कर्म करने वाला आर्य (कृण्वन्तः) बनाते हुए (अराव्णः) कृपण पापियों को (अपघ्नन्तः) परे हटाते हुए चले चलो।

भावार्थ—परम प्यारे पिता परमात्मा, हम सब पुत्रों को उपदेश देते हैं, कि मेरे प्यारे पुत्रो ! तुम आलसी न बनो, वैदिक कर्मों के करने कराने वाले बनो, कंजूस मक्खीचूस स्वार्थी पापियों को परे हटाते हुए, सारे संसार को वेदानुकूल चलने वाला आर्य, परमेश्वर का भक्त और वेद का अनन्य प्रेमी बनाओ ॥२१॥

त्वमीशिषे सुतानामिन्द्र त्वमसुतानाम् ।
त्वं राजा जनानाम् ॥२२॥ ८।६४।३॥

पदार्थ—हे (इन्द्र) सकल ऐश्वर्य सम्पन्न

परमेश्वर ! (त्वम्) आप (सुतानाम्) उत्पन्न हुए पदार्थों के (ईशिषे) शासक हैं, (त्वम् असुतानाम्) उत्पन्न न होने वाले जीव प्रकृति आकाशादि पदार्थों के भी आप शासक हैं (त्वं राजा जनानाम्) आप ही सब लोक लोकान्तरों के व प्राणीमात्र के राजा हैं।

भावार्थ—हे सर्वशक्तिमन् परमात्मन् ! आप उत्पन्न होने वाले पदार्थों और अनादि जीव प्रकृति और सब ब्रह्माण्डों के राजा हैं। जड़ चेतन सब पदार्थों पर आप शासन कर रहे हैं। आपकी आज्ञा के बिना एक पत्ता भी नहीं हिल सकता, ऐसे समर्थ आप प्रभु की शरण में हम आए हैं, कृपया आप ही हमारी रक्षा करें ॥ २२ ॥

इन्द्रो॑ दि॒व इन्द्र॑ ईशे पृथि॒व्या, इन्द्रो॑ अ॒पा-
मिन्द्र॒ इत् पर्व॑तानाम्। इन्द्रो॑ वृ॒धामिन्द्र॒
इन्मेधि॑राणा॒मिन्द्रः॒ क्षेमे॒ योगे॒ हव्य॒
इन्द्रः॑ ॥२३॥ १०।८९।१०॥

पदार्थ—(इन्द्रः दिवः ईशे) परमेश्वर द्युलोक पर शासन कर रहा है (इन्द्रः पृथिव्याः) वही इन्द्र पृथिवी का शासक है (इन्द्रः अपाम्) परमेश्वर जलों का (इन्द्रः इत् पर्वतानाम्) इन्द्र ही मेघों का (इन्द्रः वृधाम्) इन्द्र वृद्धि वालों का (इन्द्रः इत् मधिराणाम्) और इन्द्र ही मेधावियों का स्वामी है (क्षेमे) प्राप्त पदार्थों की रक्षा के लिये (योगे) अप्राप्त पदार्थ की प्राप्ति

के लिये (हव्यः इन्द्रः) वह परमेश्वर ही प्रार्थना करने योग्य है।

भावार्थ—वह सर्वशक्तिमान् परमात्मा द्युलोक पृथिवी लोक समुद्रादि जल और सम्पूर्ण मेघों पर शासन कर रहा है। सब उन्नत और उन्नति चाहने वाले मेधावियों पर भी उसी इन्द्र का शासन है। अपनी सब प्रकार की उन्नति और योग क्षेम के लिये हम सब को उसी दयालु पिता की प्रार्थना उपासना करनी चाहिए ॥२३॥

यो अर्यो मर्तभोजनं परादर्दाति दाशुषे।
इन्द्रो अस्मभ्यं शिक्षतु वि भंजा भूरिं ते वसु भक्षीय तव राधसः ॥२४॥ १।८१।६॥

पदार्थ—(यः) जो (अर्यः) सब का

स्वामी ईश्वर (मर्तभोजनम्) मनुष्यों के लिये भोजन (परा ददाति) लाकर देता है (दाशुषे) दान शील को, (इन्द्रः) वह परमेश्वर (अस्मभ्यम्) हमें दे (शिक्षतु) शिक्षा भी करे। (विभजा) हे इन्द्र! बांट कर दे। (भूरि ते वसु) तेरे पास बहुत धन है (भक्षीय तव राधसः) आपके धन को हम भोगें।

भावार्थ—यदि परमेश्वर इस जगत् को रच और धारण कर अपने पुत्र जीवों को अनेक पदार्थ न देता तो किसी को कुछ भी भोग सामग्री प्राप्त न हो सकती। जो यह परमात्मा वेद द्वारा मनुष्यों को शिक्षा भी न करता, तो किसी को विद्या का लेश भी न प्राप्त होता। इसलिये सब संसार के

पदार्थ और विद्या, बुद्धि आदि सब गुण प्रभु के ही दिये हुए हैं ॥ २४ ॥

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान् । एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः ॥२५॥
१।१६४।४६॥

पदार्थ—(विप्राः) मेधावी विद्वान् (एकम् सत्) एक सद्रूप परमात्मा को (बहुधा अनेक प्रकार से (वदन्ति) वर्णन करते हैं उसी एक को;इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्निः (अथ उ)और (सः) वह (दिव्यः) अलौकिक (सुपर्ण) उत्तम ज्ञान और उत्तम कर्म वाले(गरुत्मान्) गौरव-युक्त है, इसी को ही (यमम् मातरिश्वानम्) यम और मातरिश्वा वायु (आहुः) कहते हैं ।

भावार्थ—एक परमात्मा के अनेक सार्थक नाम हैं, जैसे इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि, दिव्य सुपर्ण, गरुत्मान्, यम, मातरिश्वा इस मन्त्र में कहे गए हैं, और अन्य अनेक मंत्रों में भी प्रभु के अनेक नाम वर्णित हैं। इन नामों से एक परमात्मा का ही उपदेश है। अनेक देवी देवताओं की उपासना का उपदेश वेदों में नहीं है। स्वार्थी लोगों ने ही अनेक देवताओं की उपासना को अपनी स्वार्थसिद्धि के लिये कहा है। वेदों में तो इसका कहीं नाम निशान नहीं, वेदों में एक परमात्मा की उपासना का ही विधान है॥

न त्वावाँ अन्यो दिव्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते। अश्वायन्तो मघवन्निन्द्र वाजिनो गव्यन्तस्त्वा हवामहे॥२६॥

७।३२।२३॥

पदार्थ—हे (मघवन् इन्द्र) परम ऐश्वर्य सम्पन्न परमेश्वर! (त्वावान्) आप जैसा (अन्यः) आप से भिन्न (न दिव्यः) न द्युलोक में और (न पार्थिवः) न ही पृथिवी पर (न जातः) न हुआ, और (न जनिष्यते) न होगा। (अश्वायन्तः) घोड़े आदि सवारियों की इच्छा करते हुए (गव्यन्तः) दुग्धादिकों के लिए गौओं की इच्छा करते हुए (वाजिनः) ज्ञान और अन्न बलादि युक्त होकर हम (त्वा हवामहे) आपकी प्रार्थना उपासना करते हैं।

भावार्थ—परमेश्वर के तुल्य न कोई हुआ, न है और न होगा। सारे ब्रह्माण्ड उसी के बनाए हुए हैं और वही सब का पालन पोषण कर रहा है। अत एव हम सब नर नारी,

उसी से गौ अश्वादि उपकारक पशु और अन्न, जल, बल, धन, ज्ञानादि मांगते हैं। क्योंकि बड़े २ राजा महाराजादि भी उसी से भिक्षा मांगने वाले हैं, हम भी उसी सब के दाता परमात्मा से इष्ट पदार्थ मांगते हैं ॥ २६ ॥

इन्द्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा । शिक्षा णो अस्मिन् पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि ॥२७॥ ७।३२।२६॥

पदार्थ—हे (इन्द्र) सर्वज्ञ प्रभो ! (यथा पिता पुत्रेभ्यः) जैसे पिता अपने पुत्रों को अच्छे ज्ञान और शुभ कर्मों को सिखलाता है, ऐसे ही आप (नः) हमें (क्रतुम्) ज्ञान और शुभ कर्मों की ओर (आभर) ले चलो। (पुरुहूत) बहुपूज्य (नः शिक्षा)

हमें शिक्षा दो (अस्मिन् यामनि) इस जीवन यात्रा में (जीवाः) हम जीते हुए (ज्योतिः) आपकी कल्याणप्रद ज्योति को (अशीमहि) प्राप्त होवें।

भावार्थ—हे सर्वशक्तिमन् इन्द्र! हमें ज्ञानी और उद्यमी बनाओ, जैसे पिता पुत्रों को ज्ञानी और उद्योगी बनाता है। ऐसे हम भी आपके पुत्र ब्रह्मज्ञानी और सत्कर्मी बनें, ऐसी प्रेरणा करो। हे भगवन्! हम अपने जीवन-काल में ही, आपके कल्याण कारक ज्योति-स्वरूप को प्राप्त होकर, अपने दुर्लभ मनुष्य जन्म को सफल करें। दयामय परमात्मन्! आपकी कृपा के विना न हम ज्ञानी बन सकते हैं, न ही सुकर्मी, अतएव हम पर आप कृपा करें कि हम ज्ञानी और सत्कर्मी बनें ॥२७॥

विशां राजानमद्भुतमध्यक्षं धर्मणामिमम् ।
अग्निमीळे स उ श्रवत् ॥२८॥ ८।४३।२४॥

पदार्थ—(विशाम्) सब प्रजाओं के (अद्भुतम् राजानम्) आश्चर्यकारक राजा (धर्मणाम्) धर्म कार्यों के (अध्यक्षम्) अधिष्ठाता अर्थात् फलप्रदाता (इमम् अग्निम्) इस अग्निदेव की (ईडे) मैं स्तुति करता हूँ (सः) वह देव (उ श्रवत्) अवश्य सुने।

भावार्थ—परमात्मदेव अद्भुत राजा और धार्मिक कामों के फलप्रदाता हैं, अपने पुत्रों की प्रेमपूर्वक की हुई स्तुति प्रार्थना को बड़े प्रेम से सुनते हैं। हे जगत्पिता परमात्मन्! मेरी टूटे फूटे शब्दों से की हुई प्रार्थना को आप अवश्य सुनें। जैसे तोतली

वाणी से की हुई बालक पुत्र की प्रार्थना को सुन कर पिता प्रसन्न होता है, वैसे आप भी हम पर प्रसन्न होवें ॥ २८ ॥

त्वमग्न इन्द्रो वृषभः सतामसि, त्वं विष्णु-रुरुगायो नमस्यः । त्वं ब्रह्मा रयिविद् ब्रह्मणस्पते,त्वं विधर्त्तः सचसे पुरन्ध्या॥२९॥

२।१।३॥

पदार्थ—हे (अग्ने) सर्वव्यापक ज्ञान स्वरूप ज्ञानप्रदाता परमात्मन्! (त्वमेव इन्द्रः) आप सारे ऐश्वर्य के स्वामी और (सताम् वृषभः) श्रेष्ठ पुरुषों पर सुख की वर्षा करने वाले (उरुगाय) बहुत स्तुति के योग्य (नमस्यः) नमस्कार करने योग्य (विष्णुः) सर्वत्र व्यापक हो। हे (ब्रह्मणः पते) सारे ब्रह्माण्ड के

और वेदों के रक्षक (त्वं विधर्तः) आप ही जगत् के धारण करने वाले हैं। (पुरन्ध्या सचसे) अपनी बड़ी बुद्धि से मिलते और प्यार करते हैं, (त्वं रयिविद् ब्रह्मा) आप ही धन वाले ब्रह्मा हैं।

भावार्थ—परमात्मन्! आपके अनेक शुभ नाम हैं। जैसे अग्नि, इन्द्र, वृषभ, विष्णु, ब्रह्मा, ब्रह्मणस्पति आदि, यह सब नाम सार्थक हैं, निरर्थक एक भी नहीं। प्रभो! अपने प्रेमी भक्तों पर सुख की वृष्टि कर्त्ता और सब के वन्दनीय और स्तुत्य आप ही हो। जितने महानुभाव ऋषि मुनि हुए हैं, वे सब आपके भक्त गुण गाते गाते कल्याण को प्राप्त हुए। आप अपनी उदार बुद्धि से अपने भक्तों को सदा मिलते और प्यार करते हैं॥ २९॥

त्वमग्ने द्रविणोदा अरंकृते,त्वं देवः सविता रत्नधा असि। त्वं भगो नृपते वस्व ईशिषे, त्वं पायुर्दमे यस्तेऽविधत् ॥३०॥

२।१।७॥

पदार्थ—हे (अग्ने) पूजनीय नेता (अरंकृते) श्रेष्ठ आचरणों से अलंकृत उद्यमी पुरुष के लिये (त्वं द्रविणोदा) आप धन के दाता (त्वं देवः सविता) आप सब सुखों के दाता देव, सब जगत् के जनक और (रत्नधा) रमणीय पदार्थों के धारण करने वाले (असि) हैं, हे (नृपते) मनुष्यमात्र के स्वामी (त्वं भगः) आप ही भजनीय सेवनीय हैं (वस्वः) धन के (ईशिषे) नियन्ता हैं (दमे) सब इन्द्रियों का दमन कर (यः ते अविधत्)

जो आपकी भक्ति प्रार्थना उपासना करता है (त्वं पायुः) आप ही उसके रक्षक हो।

भावार्थ—हे पूजनीय सब के नेता परमात्मन्! जो भद्र पुरुष श्रेष्ठ कर्मों के करने वाले हैं, उनको आप धन देते हो, उन प्रेमी भक्तों के लिये ही आपने रमणीय सकल ब्रह्माण्ड धारण किये हुए हैं। जो श्रेष्ठ पुरुष अपनी इन्द्रियों का दमन करके आपकी उपासना करते हैं, उनकी रक्षा करते हुए, उनको धर्म अर्थ काम मोक्ष यह चार पुरुषार्थ प्रदान करते हो ॥३०॥

त्वम॑ग्ने प्रम॑तिस्त्वं पि॒तासि॑ न॒स्त्वं व॑य॒स्कृत्तव॑ जा॒मयो॑ व॒यम्। सं त्वा॒ रायः॑ श॒तिनः॒ सं स॑ह॒स्रिणः॑ सु॒वीरं॑ यन्ति व्रत॒पाम॑दाभ्य ॥३१॥ १।३१।१०॥

पदार्थ—हे (अग्ने) सब के नेता प्रभो (त्वं प्रमतिः) आप श्रेष्ठ ज्ञान वाले और (नः पिता असि) हमारे पालन पोषण करने वाले पिता (वयः कृत्) जीवनदाता हैं। (वयं तव जामयः) हम सब आपके बान्धव हैं। हे (अदाभ्य) किसी से न दबने वाले परमात्मन् (सुवीरम्) उत्तम वीरों से युक्त और (व्रतपाम्) नियमों के रक्षक (त्वा शतिनः) आपको सैंकड़ों और (सहस्रिणः) हजारों (रायः) धन ऐश्वर्य (संयन्ति) प्राप्त हैं।

भावार्थ—हे परमपिता जगदीश! आप ही सब को सुबुद्धि प्रदान करते हैं, जीवन-दाता और सब के पिता भी आप ही हैं। हम सब आपके बन्धु हैं, आप किसी से

दवते नहीं, महासमर्थ होकर भी अपने अटल नियमों के पालन करने वाले हैं। सहस्रों प्रकार के ऐश्वर्य के आप ही स्वामी हैं। हम आपकी शरण में आए हैं, हमें सुबुद्धि और अनेक प्रकार का ऐश्वर्य देकर सदा सुखी वनावें, सुखी होकर भी आपकी सदा भक्ति करते रहें ॥ ३१ ॥

त्वं विश्वेषां वरुणासि राजा ये च देवा असुर ये च मर्त्ताः। शतं नो रास्व शरदो विचक्षे अश्यामायूंषि सुधितानि पूर्वा ॥३२॥ २।२७।१०॥

पदार्थ—हे (वरुण) सर्वोत्तम ! हे (असुर) प्राणदाता! (त्वं विश्वेषाम् राजा) आप उन सब के राजा (असि) हो (ये च देवाः)

जो देवता हैं(येच) और जो (मर्ताः) मनुष्य हैं (नः) हमें (शतं शरदः) सौ बरस आयु (विचक्षे) देखने के लिये (रास्व, दो,(सुधितानि) अच्छी स्थापन की हुई (पूर्वा) मुख्य (आयूंषी) आयुओं को (अश्याम) प्राप्त होवें।

भावार्थ—हे जीवनदाता सर्वोत्तम परमात्मन्! संसार में जितने जड़ दिव्य शक्ति वाले अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्र,इन्द्रादि देव हैं, और चेतन विद्वान् मनुष्य भी जो देव कहलाने के योग्य हैं। इन सब के आप ही राजा हो, इसलिये आप से ही मांगते हैं कि, हमें आपके ज्ञान और भक्ति के लिये सौ बरस पर्यन्त जीता रक्खो, जिससे हम मुख्य पवित्र आयु को प्राप्त होकर अपना और जगत् का कुछ कल्याण कर सकें॥ ३२॥

त्वमग्ने राजा वरुणो धृतव्रतस्त्वं मित्रो भवसि दस्म ईड्यः । त्वमर्यमा सत्पतिर्यस्य सम्भुजं त्वमंशो विदथे देव भाजयुः ॥२३॥
२।१।४॥

पदार्थ—हे (अग्ने) सब के पूज्य देव (त्वं राजा वरुणः) तू ही सब का राजा वरुण (धृतव्रतः)नियमों को धारण करनेवाला(दस्मः) दर्शनीय (मित्रः) सब का मित्र और (ईड्यः) स्तुति करने योग्य (भवसि) है। (त्वम् अर्यमा) तू ही न्यायकारी (त्वम् सत्पतिः) तू ही सज्जनों का पालक (यस्य) जिसका (संभुजम्) दान सर्वत्र फैला हुआ है (त्वं अंशः) यथा योग्य विभाजक (विदथे) यज्ञादिकों में (भाजयुः) सेवनीय होता है ।

भावार्थ—परमात्मा के अग्नि, देव, वरुण, मित्र, अर्यमा, अंशादि अनेक नाम हैं। इसी की यज्ञादि उत्तम कर्मों में स्तुति करनी चाहिये। वही सब को उनके कर्म अनुसार फल देने वाला है, और वही सेवनीय है ॥३३॥

यो मृळयाति चक्रुषे चिदागो वयं स्याम वरुणे अनागाः। अनुव्रतान्यदितेर्ऋधन्तो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३४॥

७।८७।७॥

पदार्थ—(यः) जो प्रभु (आगः चक्रुषे) अपराध करने वाले पर (चित्) भी (मृड-याति) दया रखता है (वरुणे) उस श्रेष्ठ जगदीश्वर के समीप (वयम् अनागाः स्याम) हम अपराध हीन होवें (अदितेः) उस

अखण्ड अविनाशी परमेश्वर के (व्रतानि अनु) नियमों के अनुसार (ऋधन्तः) आचरण करें। हे महात्मा पुरुषो ! (यूयम्) आप लोग (नः) हमें (स्वस्तिभिः) कल्याणों से (पात) रक्षित करो।

भावार्थ—हम जीव अनेक अपराध करते हैं, तो भी वह दयालु पिता, हमें अनेक प्रकार के भोग्य पदार्थ देता ही रहता है, वही प्रभु, हमें उत्तम वेदानुयायी विद्वान् भक्त महापुरुषों का सहवास भी देता है। उन महात्माओं के उपदेशों से हम भी प्रभु के अनन्य भक्त बन कर कल्याण के भागी बन जाते हैं॥३४

तमध्वरेष्वीळते देवं मर्ता अमर्त्यम्।
यजिष्ठं मानुषे जने ॥३५॥ ५।१४।२॥

पदार्थ—(मर्ताः) मनुष्य (मानुपे जने) मनुष्यमात्र के अन्दर वर्त्तमान (तं यजिष्टम्) उस पूजनीय (अमर्त्यम् देवम्) अमर देव की (अध्वरेपु) यज्ञादि उत्तम कर्मों में (ईडते) स्तुति करते हैं।

भावार्थ—जगत्पिता परमात्मा अन्तर्यामी रूप से मनुष्यमात्र के अन्दर विराजमान है, वही अमर और सब का पूजनीय है, उसी की यज्ञादि उत्तम कर्मों में बड़े प्रेम से उपासना करनी चाहिये। जिन यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों में, उस अमर और पूजनीय प्रभु की उपासना प्रार्थना प्रेम से की गई हो, वह यज्ञादि कर्म निर्विघ्न समाप्त होते और अत्यन्त कल्याण के साधक बनते हैं ॥ ३५ ॥

अहं भुवं वसुनः पूर्व्यस्पतिरहं धनानि संजयामि शश्वतः । मां हवन्ते पितरं न जन्तवोऽहं दाशुषे विभजामि भोजनम् ॥३६॥

१०।४८।१॥

पदार्थ—(अहम्) मैं (वसुनः) धन का (पूर्व्यः पतिः) मुख्य स्वामी (भुवम्) होता हूँ, (अहम् शश्वतः धनानि) मैं सनातन धनों को (संजयामि) उत्तम रीति से प्राप्त करता हूं । (जन्तवः) सब मनुष्य (पितरं न) पिता की नाईं (मां हवन्ते) मुझे (धन प्राप्ति कें लिये) पुकारते हैं (अहं दाशुषे) मैं दानशील के लिये (भोजनम् विभजामि) अनेक प्रकार के धन और भोजनादि सुन्दर २ पदार्थ देता हूँ ।

भावार्थ—परमदयालु परमात्मा, मनुष्यों को वेद द्वारा उपदेश देते हैं—हे मेरे पुत्रो ! मैं सब धनों का स्वामी हूँ, मेरे आधीन ही सब पदार्थ हैं। जैसे बालक अपने पिता से मांगते हैं, वैसे ही सब मनुष्य मुझ से मांगते हैं, सब का दाता मैं ही हूँ। परन्तु दानशील पुरुष को मैं विशेष रूप से धनादि पदार्थ देता हूँ, क्योंकि वह दाता सदा उत्तम कर्मों में ही धन को खर्च करता है ॥ ३६ ॥

अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः। यं कामये तं तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम् ॥३७॥

१०।१२५।५॥

पदार्थ—(अहम् एव स्वयम्) मैं आप ही

(इदम् वदामि) यह कहता हूँ (जष्टम् देवेभिः) जो मेरा वचन विद्वानों ने प्रेम से सुना (उत मानुषेभिः) और सब मनुष्यों ने भी प्रीति पूर्वक सेवन किया। (यं कामये तं तं उग्रं कृणोमि) जिस जिसको मैं चाहता हूं उस उसको तेजस्वी क्षत्रिय बनाता हूं, (तं ब्रह्माणम्) उसको ब्रह्मा, चार वेदों का वक्ता (तं ऋषिम्) उसको ऋषि (तं सुमेधाम्) उसको धारण करने वाली श्रेष्ठ बुद्धिवाला बनाता हूँ।

भावार्थ—परमदयालु पिता वेद द्वारा हम सब को कहते हैं कि, हे मेरे प्यारे पुत्रो! मेरे वचनों को सब विद्वानों ने और साधारण बुद्धिवाले मनुष्यों ने बड़े प्रेम से सुना और सेवन किया। मैं ही तेजस्वी क्षत्रिय को, चार वेद वक्ता ब्रह्मा ऋषि को और

उज्ज्वल बुद्धिवाले सज्जन को बनाता हूँ। आप सब लोग वेदानुकूल कर्म करने वाले मेरे प्रेमी भक्त बनो, ताकि मैं आप लोगों को भी उत्तम से उत्तम बनाऊँ॥ ३७॥

अहं भूमिमददामार्यायाहं वृष्टिं दाशुषे मर्त्याय। अहमपो अनयं वावशाना मम देवासो अनुकेतमायन्॥३८॥ ४।२६।२॥

पदार्थ—(आर्याय अहं भूमिम् अददाम्) मैं अपने पुत्र आर्य पुरुष को पृथिवी देता हूं, (अहम्) मैं (दाशुषे मर्त्याय) दान-शील मनुष्य के लिये धन की (वृष्टिम्) वर्षा करता हूँ (अहम्) मैं ही (वावशानाः अपः) बड़े शब्द करने वाले जलों को (अनयम्) पृथिवी पर लाया हूँ (देवासः)

विद्वान् (मम केतम्) मेरे ज्ञान के (अनु आयन्) अनुसार चलते हैं ।

भावार्थ—दयामय परमात्मा का उपदेश है कि, हे बुद्धिमान् आर्यपुरुष ! मैं पृथिवी अपने पुत्र आर्य पुरुष आप लोगों को देता हूँ, धनादि उत्तम पदार्थों को आपके लिये वर्षा करता हूँ, नदियों का उत्तम जल भी मैं आप लोगों के लिये वर्षाता हूँ, तुम अपनी अयोग्यता से खो देते हो । धार्मिक विद्वान् बनो, क्योंकि सब विद्वान् मेरे ज्ञान और मेरी आज्ञा के अनुसार चल कर ही सुखी होते हैं ॥३८

इन्द्रो राजा जगतश्चर्षणीनामधि क्षमि विषुरूपं यदस्ति । ततो ददाति दाशुषे वसूनि चोदद्राध उपस्तुतश्चिदर्वाक् ॥३९॥
७।२७।३॥

पदार्थ—(इन्द्रः) परमेश्वर (जगतः) सारे जगत् का और (चर्षणीनाम्) मनुष्यों का (क्षमि अधि) पृथिवी में (यत्) जो (वि-सु-रूपम्) अनेक प्रकार का सुन्दर पदार्थ समुदाय (अस्ति) है उसका (राजा) प्रकाशक और स्वामी है (ततः) उस पदार्थ समूह से (दाशुषे) दाता मनुष्य को (वसूनि) अनेक प्रकार के धनों को (ददाति) देता है, (चित्) यदि (अर्वाक्) प्रथम वह (राधः) धन का (चोदत्) प्रेरक (उपस्तुतः) स्तुति किया गया हो।

भावार्थ—जो यह सब स्थावर जंगम संसार है, इस सब का प्रकाशक और स्वामी परमेश्वर है, वह सब को उनके कर्मानुसार अनेक प्रकार के धनादि सुन्दर

पदार्थ प्रदान करता है। सब मनुष्यों को चाहिये कि उस प्रभु की वेदानुकूल स्तुति प्रार्थना उपासनादि करें, इसलिये अनेक सुन्दर पदार्थों की प्राप्ति के लिये भी, हमें उस जगत्पति की प्रार्थनादि करनी चाहिये ॥३९॥

अथा ते अन्तमानां विद्याम सुमतीनाम्।
मा नो अति ख्य आगहि ॥४०॥ १।४।३॥

पदार्थ—हे इन्द्र (ते अन्तमानाम्) आपके समीपवर्त्ती—आपकी आज्ञा में स्थित (सुमतीनाम्) श्रेष्ठ बुद्धि वाले महात्माओं के समागम से (विद्याम) आपके यथार्थ स्वरूप को हम जान लेवें और आप (नः) हमको (मा अतिख्यः) हमारे हृदय में स्थित हुए

महात्माओं के उपदेश का उल्लंघन करने वाला मत बनाओ किन्तु (आगहि) प्राप्त होओ।

भावार्थ—हे परमात्मन्! आप हमें सदाचारी, परोपकारी, विद्वान् अपने भक्त महात्मा सन्तजनों का सत्संग दो। क्योंकि सत्सङ्ग के प्रभाव से अनेक नीच उत्तम बन गये, मूर्ख विद्वान् बन गये, जिनको प्रथम कोई नहीं जानता था, वे माननीय कीर्ति वाले बन गये, दुराचारी दुर्व्यसनी पतित भी आप के अनन्य भक्त, सदाचारी और पतित-पावन बन गये, सत्सङ्ग की महिमा अपार है। सत्सङ्ग से जो जो लाभ होते हैं, वे लिखे वा कहे नहीं जा सकते। इसलिये पिताजी! आपने हमको वेद द्वारा कहा है

कि तुम मेरे से सत्संग की प्रार्थना करो, जिससे तुम्हारा यह मनुष्य जन्म सफल हो। विना सत्संग के श्रद्धाहीन महामलीन पराधीन निश दिन विषयों में लवलीन, व्यर्थ बकवक करने वालों को कुछ भी लाभ नहीं होता ॥ ४० ॥

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥४१॥
१०।१२१।१॥

पदार्थ—(हिरण्यगर्भः) सूर्यचन्द्रादि तेजस्वी पदार्थों को उत्पन्न करके धारण करने वाला (अग्रे) सब जगत् की उत्पत्ति से प्रथम (समवर्त्तत) ठीक वर्त्तमान था, (भूतस्य)

वही उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत् का (जातः) प्रसिद्ध (पतिः) स्वामी (आसीत्) है (सः) वह (इमाम्) इस (पृथिवीम्) भूमि (उत) और (द्याम्) सूर्यादि को (दाधार) धारण कर रहा है। हम सब लोग (कस्मै) उस सुख-स्वरूप प्रजापति (देवाय) सब सुख प्रदाता परमात्मा के लिये (हविषा) ग्रहण करने योग्य प्रेम भक्ति से (विधेम) सेवा किया करें।

भावार्थ—जो परमात्मा इस संसार की रचना से प्रथम एक ही जाग रहा था, जीव गाढ़ निद्रा में लीन थे और जगत् का कारण भी सूक्ष्मावास्था में था, उसी परमात्मा ने पृथिवी सूर्यचन्द्रादि लोकों को उत्पन्न करके धारण किया हुआ है, वही सुख स्वरूप सब का स्वामी है, उसी सुखदाता जगत्पति

की श्रद्धा और प्रेम से सदा भक्ति करनी चाहिये अन्य की नहीं ॥ ४१ ॥

य आत्मदा बलदा यस्य विश्वे उपासते प्रशिषं यस्य देवाः । यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ४२ ॥ १०।१२१।२॥

पदार्थ—(यः) जो (आत्मदा) आत्मज्ञान का दाता (बलदा) और जो शरीर आत्मा और समाज के बल का दाता है (यस्य) जिसकी (विश्वे) सब (देवाः) विद्वान् लोग (उपासते) उपासना करते हैं और (यस्य) जिसकी (प्रशिषम्) उत्तम शासन पद्धति को मानते हैं (यस्य) जिसका (छाया) आश्रय ही (अमृतम्) मोक्ष सुखदायक है और (यस्य)

जिसका न मानना, भक्ति न करना ही (मृत्युः) मरण है (कस्मै देवाय) उस सुखस्वरूप सकलज्ञानप्रद परमात्मा की प्राप्ति के लिये (हविषा) श्रद्धा भक्ति से हम (विधेम) वैदिक आज्ञा पालन करने में तत्पर रहें।

भावार्थ—वह पूर्ण परमात्मा अपने भक्तों को अपना ज्ञान और सब प्रकार का बल प्रदान करता है। सब विद्वान् लोग जिसकी सदा उपासना करते हैं और उसकी ही वैदिक आज्ञा को शिरोधार्य मानते हैं, जिसकी उपासना करना मुक्तिदायक है, जिसकी भक्ति न करना वारंवार संसार में, अनेक जन्ममरणादि कष्टों का देनेवाला है। इस लिए ऐसे प्रभु से हमें कभी विमुख न होना चाहिए॥ ४२॥

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव । य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥४३॥
१०।१२१।३॥

पदार्थ—(यः) जो (प्राणतः) श्वास लेने वाले (निमिषतः) और प्राणिरूप (जगतः) जगत् का (महित्वा) अपनी अनन्त महिमा से (एक इत्) एक ही (राजा) विराजमान राजा (बभूव) हुआ है (यः)जो (अस्य द्विपदः) इस दो पांव वाले शरीर और (चतुष्पदः) गौ आदि चार पांव वाले शरीर की (ईशे) रचना करके उन पर शासन करता है (कस्मै) सुख स्वरूप, सुखदायक (देवाय) कामना करने योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिए (हविषा)

सब सामर्थ्य से विधेम विशेष भक्ति किया करें।

भावार्थ—हे परमात्मन्! आप एक ही सब जगत् के महाराजाधिराज, समस्त जगत् के उत्पन्न करने हारे, सकल ऐश्वर्य युक्त महात्मा न्यायाधीश हैं। आप जगत्पति की उपासना से ही धर्म अर्थ काम और मोक्ष यह चारों पुरुषार्थ प्राप्त हो सकते हैं, अन्य की उपासना से कभी नहीं ॥ ४३ ॥

येन॒ द्यौरु॒ग्रा पृ॑थि॒वी च॑ दृ॒ळ्हा येन॒ स्वः॑ स्तभि॒तं येन॒ नाकः॑। यो अ॒न्तरि॑क्षे॒ रज॑सो वि॒मानः॒ कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम ॥४४॥

१०।१२१।५॥

पदार्थ—(येन) जिस परमेश्वर ने (उग्रा)

तेजस्वी (द्यौः) प्रकाशमान सूर्यादि लोक और (दृढा) बड़ी दृढ़ (पृथिवी) पृथिवी (येन) जिस जगदीश्वर ने (स्वः) सामान्य सुख (स्तभितम्) धारण किया और (येन) जिस प्रभु ने (नाकः) दुःख रहित मुक्ति को भी धारण किया है। (यः) जो अन्तरिक्षे आकाश में (रजसः) लोक लोकान्तरों को (विमानः) निर्माण करता और भ्रमण कराता है। जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं ऐसे ही सब लोक जिसकी प्रेरणा से घूम रहे हैं (कस्मै) उस सुखदायक (देवाय) दिव्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिये (हविषा विधेम) प्रेम से भक्ति करें।

भावार्थ—हे जगत्पते! आपने ही बड़े तेजस्वी सूर्य चन्द्रादि लोक और विस्तीर्ण

पृथिवी आदि लोक और सामान्य सुख और सब दुःखों से रहित मुक्ति सुख को भी धारण किया हुआ है। अर्थात् सब प्रकार का सुख आपके आधीन है, ऐसे समर्थ आकाश की न्याईं व्यापक, आपकी भक्ति से ही लोक परलोक का सुख प्राप्त हो सकता है अन्यथा नहीं ॥ ४४ ॥

प्रजा॑पते॒ न त्वदे॒तान्य॒न्यो विश्वा॑ जा॒तानि॒ परि॒ ता ब॑भूव । यत्का॑मास्ते जुहु॒मस्तन्नो॑ अस्तु व॒यं स्या॑म॒ पत॑यो र॒यीणा॑म् ॥४५॥

१०।१२१।१०॥

पदार्थ—हे (प्रजापते) प्रजापालक, प्रजा के स्वामी परमात्मन्! (त्वत्) आपसे (अन्यः) भिन्न दूसरा कोई (ता) उन (एतानि) इन

(विश्वा) सब (जातानि) उत्पन्न हुए जड़ चेतनादिकों को (न) नहीं (परिबभूव) तिरस्कार करता है,अर्थात् आप सर्वोपरि हैं (यत्कामाः) जिस २ पदार्थ की कामना वाले हम लोग (ते) आपका (जुहुमः) आश्रय लेवें और वाञ्छा करें (तत्) वह पदार्थ (नः) हमारे लिये (अस्तु) वर्त्तमान हो (वयम्) हम लोग (रयीणाम्) सब प्रकार के धनों के (पतयः स्याम) स्वामी होवें।

भावार्थ—हे जगत्पते अन्तर्यामिन्! आप सारे जगतों पर अखण्ड राज्य कर रहे हो। आपके विना दूसरे किस की शक्ति है जो प्रत्यक्ष और परोक्ष लोक लोकान्तरों पर शासन करे। आपकी कृपा से ही आपके उपासक को इस लोक और परलोक का ऐश्वर्य प्राप्त हो सकता है ॥४५॥

यस्मान्न ऋते विजयन्ते जनासो यं युद्ध्य-
माना अवसे हवन्ते। यो विश्वस्य प्रति-
मानं बभूव यो अच्युत च्युत् स जनास
इन्द्रः ॥ ४६ ॥ २।१२।९॥

पदार्थ—हे परमात्मन्! (यस्मात् ऋते) जिस आपकी कृपा के विना (जनासः) मनुष्य (न विजयन्ते) विजय को नहीं प्राप्त होते (युद्ध्यमानाः) युद्ध करते हुए (अवसे) अपनी रक्षा के लिए (यम् हवन्ते) जिस आपकी प्रार्थना करते हैं (यः) जो भगवान् (विश्वस्य) सब जगत् का (प्रतिमानम् बभूव) प्रत्यक्ष मापने वाला है (यो अच्युत च्युत्) जो प्रभु आप न गिरता हुआ

दूसरों को गिराने वाला है (जनासः) हे मनुष्यो! (स इन्द्रः) वह इन्द्र है।

भावार्थ—जिस प्रभु की कृपा के विना, मनुष्य कभी विजय को नहीं प्राप्त हो सकते। काम क्रोधादि आभ्यन्तर शत्रुओं के साथ और बाहिर के शत्रुओं के साथ भी युद्ध करते हुए, अपनी रक्षा के लिये, जिसकी प्रार्थना सब मनुष्य करते हैं। जो प्रभु आप अटल हुआ भी दूसरे सबों को गिरा देता है। हे मनुष्यो! वह सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर ही इन्द्र है, ऐसा आप सब लोग जानो॥४६॥

त्वं भुवः प्रतिमानं पृथिव्या ऋष्ववीरस्य बृहतः पतिर्भूः। विश्वमा प्रा अन्तरिक्षं महित्वा सत्यमद्धा नकिरन्यस्त्वावान्॥४७॥
१।५२।१३॥

पदार्थ—(त्वम्) भगवन्! आप (पृथिव्याः) पृथिवी लोक को (प्रतिमानम्) प्रत्यक्ष मापने वाले हैं (ऋष्ववीरस्य) दर्शनीय वीरों वाले (बृहतः) बड़े द्युलोक के (पतिः भूः) स्वामी हैं (विश्वम्) सब (अन्तरिक्षम्) अन्तरिक्ष को आपने (महित्वा) अपने महत्त्व से (आप्रा) परिपूर्ण किया है (सत्यम्) यह सत्य (अद्धा) और निश्चित है कि (त्वावान्) आप जैसा (अन्यः न किः) दूसरा कोई नहीं है।

भावार्थ—परमेश्वर सारी पृथिवी को प्रत्यक्ष मापने और जानने वाला है, बड़े २ दर्शनीय वीर और नक्षत्रों वाले महान् द्युलोक का भी स्वामी है। सारे मध्यलोक को, जिस प्रभु ने व्याप्त कर रखा है। यह निश्चित

सत्य है, कि उस जैसा दूसरा कोई तीनों लोकों में न हुआ, न है और न ही होगा ॥४७॥

त्वं विश्वस्य धनदा असि श्रुतो य ईं भवन्त्याजयः । तवायं विश्वः पुरुहूत पार्थिवोऽवस्युर्नाम भिक्षते ॥ ४८॥

७।३२।१७॥

पदार्थ—हे दयामय जगदीश (त्वम् विश्वस्य धनदा असि) आप सब को धन देने वाले हैं (ये आजयः) जो युद्ध (ईं भवन्ति) यहां होते हैं उनमें भी (श्रुतः) आपका यश होता है (पुरुहूत) बहुतों से पुकारे गए ! (तव अयम्) आपका यह (पार्थिवः) पृथिवी पर रहने वाला (अवस्युः) अपनी रक्षा चाहने वाला मनुष्य (नाम)

प्रसिद्ध (भिक्षते) आप से ही सब कुछ मांगता है।

भावार्थ—हे परमात्मन्! सारे जगत् में जितने मनुष्य हैं ये सब, आप से ही अपनी रक्षा चाहते हैं, और आप से ही अनेक प्रकार का धन ऐश्वर्य मांगते हैं। आप उनके कर्मानुसार उनकी रक्षा करते और धन भी देते हैं। जिस धन के लिये संसार में अनेक युद्ध हुए और होते रहते हैं, उस धन के प्रदाता भी आप ही हैं, बड़े २ राजा महाराजा भी आपके आगे सब भिखारी हैं। आप अपने प्यारे भक्तों से प्रसन्न होकर सब धनादि पदार्थ देकर इस लोक में सुखी करते, और परलोक में भी मुक्ति सुख देकर सदा सुखी बनाते हैं॥४८॥

बलं धेहि तनूषु नो बलमिन्द्रानळुत्सु नः।
बलं तोकाय तनयाय जीवसे त्वं हि बलदा
असि ॥ ४९॥   ३।५३।१८॥

पदार्थ—हे इन्द्र ! (नः तनूषु) हमारे शरीरों में (बल धेहि) बल दो (नः अनळुत्सु) हमारे बैलादि पशुओं को बल दो, (बलं तोकाय तनयाय) हमारे पुत्र और पौत्रों को बल दो। (जीवसे) सुख पूर्वक जीने के लिए (त्वम् हि बलदा असि) आप ही बलदाता हो।

भावार्थ—हे महा समर्थ परमेश्वर ! कृपा करके हमारे शरीरों में बल प्रदान करें, जिससे हम आपकी भक्ति और वेद विचार, प्रचारादि कर सकें ऐसे ही हमारे पुत्र, पौत्रादि सन्तानों में भी बल और जीवन प्रदान करें

जिससे उनमें भी, आपकी भक्ति, और वेद विचारादि उत्तम साधनों का सद्भाव वना रहे, और जिससे सव लोग आस्तिक और आपके प्रेमी भक्त वन कर सदा सुख के भागी वनें। भगवन्! आप ही सव के वल-प्रदाता हो, इसलिए आपसे ही वल की हम लोग प्रार्थना करते हैं।

भूरिं त इन्द्र वीर्यं१तव स्मस्यस्य स्तोतुर्मघवन् काममापृण। अनु ते द्यौर्बृहती वीर्यं मम इयं च ते पृथिवी नेम ओजसे॥ ५०॥ १।५७।५॥

पदार्थ—हे इन्द्र! (भूरि ते वीर्यम्) आपका वल बड़ा है (तव स्मसि) हम आपके हैं (मघवन्) हे धनवान् प्रभो!

(अस्य स्तोतुः) अपने इस स्तोता की (कामम् आपृण) कामना को पूर्ण करो (बृहती: द्यौः) यह वड़ा द्यु लोक (ते वीर्यम्) आपके बल का (अनुममे) अनुमान करा रहा है (इयम् च पृथिवी) और यह पृथिवी (ते ओजसे नेमे) आपके बल के सामने नम्र हो रही है।

भावार्थ—हे समर्थ प्रभो! आप महाबली हो, यह समग्र पृथिवी और यह बड़ा द्युलोक आपने ही बनाया है। यह पृथिवी आदि लोक लोकान्तर, हमें अनुमान द्वारा बता रहे हैं, कि हमारा कर्ता धर्ता सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर है, क्योंकि हम देखते हैं कि जड़ से अपने आप ही कोई पदार्थ उत्पन्न नहीं होता, चेतन जीव की इतनी शक्ति नहीं कि, इस सारी पृथिवी और द्युलोक, सूर्य, चन्द्र,

मंगल, बुध, बृहस्पति आदि लोक लोकान्तरों को उत्पन्न कर सके। इस लिये हम स्तोता, आपकी ही स्तुति प्रार्थना उपासना करते हैं; आप हमारी कामनाओं को पूर्ण करें ॥५०॥

इन्द्रस्य कर्म सुकृता पुरूणि व्रतानि देवा न मिनन्ति विश्वे। दाधार यः पृथिवीं द्यामुतेमां जजान सूर्य्यमुषसं सुदंसाः ॥५१॥

३।३२।८॥

पदार्थ—(यः) जो (पृथिवीम् दाधार) पृथिवी को उत्पन्न करके धारण कर रहा है (उत इमाम् द्याम्) और इस द्युलोक को उत्पन्न करके धारण कर रहा है और जिस (सुदंसाः) श्रेष्ठ कर्मों वाले ने (सूर्य्यम्) सूर्य और (उषसम्) प्रभात को (जजान)

उत्पन्न किया है उस (इन्द्रस्य कर्म) इन्द्र के कर्मों को जो (सुकृता) अच्छी तरह से किये हुए (पुरूणि) बहुत अनन्त और (व्रतानि) नियम बद्ध हैं, (विश्वे देवाः) सब विद्वान् (न मिनन्ति) नहीं जानते।

भावार्थ—सर्वशक्तिमान् इन्द्र के नियम बद्ध अनन्त श्रेष्ठ कर्म हैं, जिनको बड़े बड़े विद्वान् भी नहीं जान सकते। जिस प्रभु ने, इस सारी पृथिवी को और ऊपर के द्युलोक को उत्पन्न करके धारण किया है, और उसी उत्तम कर्मों वाले जगत्पति परमात्मा ने, इस तेजोराशी-सूर्य को तथा प्रभात को उत्पन्न किया है। मनुष्यों के कैसे भी नियम बद्ध कर्म हों, इनका उलट पुलट होना हम देख

रहे हैं, परन्तु उस जगदीश के अटल नियमों को कोई तोड़ नहीं सकता है ॥५१॥

मृत्योः पदं योपयन्तो यदैतद्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः। आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः ॥५२॥ १०।१८।२॥

पदार्थ—(मृत्योः पदम्) मृत्यु के पांव को (योपयन्तः) परे हटाते हुए (द्राघीयः आयुः) लम्बी आयु को (प्रतरम्) अधिक दीर्घ बना कर (दधानाः) धारण करते हुए (यदा एत) जब तुम चलो तब (प्रजया धनेन) प्रजा से और धन से (आप्यायमानाः) वृद्धि को प्राप्त होते हुए (शुद्धा) बाहर से शुद्ध (पूताः) मन से पवित्र (यज्ञियासः) पूजनीय (भवत) होवो।

भावार्थ—परम दयालु जगदीश का उपदेश है, कि हे मेरे प्यारे पुत्रो ! आप लोग मृत्यु के पांव, दुराचार और मन की अपवित्रता को परे हटाते हुए, सत्संग सदाचार ब्रह्मचर्य और वेदों के स्वाध्यायादि साधनों से अपनी आयु को बढ़ाते हुए मेरे मार्ग पर आओ। मेरी अनन्य भक्ति आप लोगों को, अन्दर बाहर से शुद्ध करती हुई, प्रजा धनादिकों से सन्तुष्ट करके पूजनीय बनावेगी॥५२॥

सहस्रं साकमर्चत परिष्टोभत विंशतिः।
शतैनमन्वनोनवुरिन्द्राय ब्रह्मोद्यतमर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥५३॥ १।८०।९॥

पदार्थ—(सहस्रम्) हजार (साकम्) साथ मिलकर (अर्चत) स्तुति करो (परि

स्तोभत) स्तोत्र उच्चारण करो (विंशतिः) वीस (शता) सैंकड़ों ने (एनम्) इसकी (अनु अनोनवुः) वारंवार स्तुति की है (इन्द्राय) इन्द्र के लिए ब्रह्म मन्त्र रूप स्तुति (उत) ऊपर (अयतम्) उठाई गई वह (अनुस्वराज्यम्) अपने राज्य को (अर्चत) प्रकाशित करता हुआ विराजमान् है ।

भावार्थ—हे मुमुक्षु पुरुषो ! आप हजार इकट्ठे होकर इन्द्र भगवान् की स्तुति करो, वीस इकट्ठे होकर स्तोत्र उच्चारण करो इसकी सैंकड़ों ने वारंवार स्तुति की है । ऋषि महात्माओं ने मन्त्र रूप स्तुति की ध्वनि को ऊपर उठाया है । वह इन्द्र भगवान् अपने राज्य को प्रकाशित करता हुआ विराजमान् है । जो विदेशी लोग कहा करते हैं कि,

भारतवासी, मिलकर बैठना और मिलकर प्रभु की प्रार्थना करना जानते ही नहीं थे, उनको चाहिए कि, इस मन्त्र को देखें, हमारे महर्षि लोग, जो वेदों का अभ्यास करते थे वे सब इस बात को जानते थे। एकान्त वनों में बैठ कर उपासना करते, सभा समाजों में भी आते, इकट्ठे बैठ कर प्रभु-प्रार्थना करते कराते थे ॥ ५३ ॥

तमित्सखित्व ईमहे तं राये तं सुवीर्ये ।
स शक्र उत नः शकदिन्द्रो वसु दयमानः ॥५४॥ १।१०।६॥

पदार्थ—हम सब लोग (तम् इत्) उस इन्द्र को ही (सखित्वे) मित्रता के लिए (तम् राये) उसको धन के लिए (ईमहे) मांगते हैं

(स शक्रः) वह शक्तिमान् है (इन्द्रः) उस इन्द्र ने (नः) हमको (वसु दयमानः) धन देते हुए (शकत्) शक्तिमान् किया है ।

भावार्थ—हम सब लोग, उस इन्द्र परमेश्वर की, मित्रता के लिए, धन के लिए और उत्तम सामर्थ्य के लिये, प्रार्थना करते हैं। उस शक्तिमान् इन्द्र प्रभु ने ही, हमें धन देते हुए, शक्तिमान् भी बनाया है। यदि वह परमात्मा, हमें शरीरबल, बुद्धिबल और सामाजिक बल, न देता तो हम लोग कैसे जीवित रह सकते ? सृष्टि रचना के आदि में ही उस प्रभु ने आर्य जाति को उत्पन्न किया, बुद्धि बल आदि इस जाति को दिए तब ही तो यह आर्य जाति जीवित है, नहीं तो यह जाति कब की नष्ट हो जाती ।

इस जाति का नाश उस परमात्मा को अभीष्ट नहीं है ॥ ५४ ॥

त्वं नः पश्चादधरादुत्तरात्पुर इन्द्र नि पाहि विश्वतः। आरे अस्मत्कृणुहि दैव्यं भयमारे हेतीरदेवीः ॥५५॥ ८।६१।१६॥

पदार्थ—हे इन्द्र प्रभो ! (नः पश्चात्) हमारी पीछे से (अधरात्) नीचे से (उत्तरात्) ऊपर से (पुरः) आगे से और (विश्वतः) सब ओर से (निपाहि) सदा रक्षा करें। (दैव्यम् भयम्) आधिदैविक भय को और (अदेवीः) मनुष्य और राक्षसों से होने वाले (हेतीः) भय को भी (अस्मत्) हम से (आरे कृणुहि) दूर करें।

भावार्थ—हे कृपासिन्धो परमात्मन् ! पीछे

से, नीचे से, ऊपर से, आगे से और सब दिशाओं से हमारी सब प्रकार सदा रक्षा करें। अग्नि, बिजुली आदि से होने वाला आधिदैविक भय, और ज्वरादि से होने वाला आध्यात्मिक भय सिंह सर्प चोर डाकू राक्षस पिशाचादिकों से होने वाला अनेक प्रकार का आधिभौतिक भय हम से दूर हटावें, जिससे हम निर्भय होकर आप जगत्पिता की भक्ति में और आपकी वैदिक ज्ञान के प्रचार की आज्ञा पालन में सदा तत्पर रहें ॥ ५५ ॥

योगे॑योगे त॒वस्त॑रं॒ वाजे॑वाजे हवामहे।
सखा॑य॒ इन्द्र॑मू॒तये॑ ॥५६॥ १।३०।७॥

पदार्थ—(सखायः) हे मित्रो ! (योगे-

योगे) प्रत्येक कार्य के आरम्भ में और (वाजे वाजे) प्रत्येक युद्ध में (तवस्तरम्) अति वल वाले (इन्द्रम्) इन्द्र को (ऊतये) रक्षा के लिये (हवामहे) हम बुलाते हैं ।

भावार्थ—हे मित्रो ! सब कार्यों के और सब युद्धों के आरम्भ में, अति बलवान् इन्द्र की, अपनी रक्षा के लिए हम सब लोग प्रेम से प्रार्थना करते हैं, जिससे हमारे सब कार्य निर्विघ्नतया पूर्ण हों । हमारे मन में ही जो सदा देवासुर संग्राम बना रहता है, सात्विक दैवी गुण अपनी विजय चाहते हैं और तामसी राक्षसी गुण अपनी विजय चाहते हैं । उनमें तामसी गुणों की पराजय होकर, हमारे दैवी गुणों की विजय हो, जिससे हम इस आभ्यन्तर युद्ध में विजयी

होकर इस लोक और परलोक में सदा सुखी रहें ॥ ५६ ॥

ऋषिर्हि पूर्वजा अस्येक ईशान ओजसा ।
इन्द्र चोष्कूयसे वसु ॥५७॥ ८।६।४१॥

पदार्थ—हे (इन्द्र) परमेश्वर! आप (हि) निश्चित (ऋषिः) सर्वज्ञ (पूर्वजा) सब से पूर्व विद्यमान् (ओजसा) अपने बल से (एकः ईशानः असि) अकेले सब पर शासन करने वाले हैं और (वसु) सब धन को (चोष्कूयसे) अपने अधीन रखते हैं।

भावार्थ—हे सब ऐश्वर्य के स्वामी इन्द्र! इस संसार में सब से पूर्व विद्यमान् आप ऋषि हैं। सब का द्रष्टा होने से आपको वेद ने ऋषि कहा है। संसार भर का सारा धन

आपके अधीन है। जिस पर आप प्रसन्न होते हैं, उसको अनेक प्रकार का धन आप ही देते हैं। और अकेले ही अपने अनन्त बल से सब पर शासन कर रहे हैं ॥५७॥

उतो घा ते पुरुष्या३ इदासन्येषां पूर्वेषामशृणोर्ऋषीणाम्। अधाहं त्वा मघवञ्जोहवीमि त्वं न इन्द्रासि प्रमतिः पितेव ॥५८॥

७।२९।४॥

पदार्थ—हे (इन्द्र) परमात्मन्! (येषाम् पूर्वेषाम् ऋषीणाम्) जिन पूर्व कल्पों के ऋषियों की प्रार्थनाओं को (अशृणोः) आपने सुना (ते घा उत) वे भी तो (पुरुषाः इत् आसन्) मनुष्य ही थे। हे (मघवन्)

धनवान् ! (अधः अहम्) अब मैं (त्वा जोहवीमि) आपको बारंबार पुकारता हूँ (त्वम् नः) आप हमारे (पिता इव) पिता की नाईं (प्रमतिः असि) श्रेष्ठ मति देने वाले हैं ।

भावार्थ—हे परमेश्वर ! आप पूर्व कल्पों के ऋषि महात्माओं की प्रार्थनाओं को बड़े प्रेम से सुनते आए हैं । भगवन् ! वे भी तो मनुष्य ही थे । आपकी कृपा से ही तो वे ऋषि महात्मा बन गए । अब भी जिस पर आपकी कृपा हो, वह ऋषि महात्मा बन सकता है । इसलिए हम आपकी बड़े प्रेम से बारंबार प्रार्थना उपासना और स्तुति करते हैं आप ही पिता की नाईं दयालु होकर हमें श्रेष्ठ मति प्रदान करें, जिससे हम लोक में और परलोक में सदा सुखी हों ॥५८॥

इन्द्र॒ श्रेष्ठा॑नि॒ द्रवि॑णानि धेहि चित्तिं॒
दक्ष॑स्य सुभग॒त्वम॒स्मे । पोषं॑ रयी॒णामरि॑ष्टिं
त॒नूनां॑ स्वाद्मानं॑ वा॒चः सु॑दिन॒त्वमह्ना॑म्॥५९॥
२।२१।६॥

पदार्थ—(इन्द्र) हे परमैश्वर्ययुक्त परमात्मन् ! (अस्मे) हमको (श्रेष्ठानि) श्रेष्ठ (द्रविणानि) धन, (दक्षस्य) बल सम्बन्धी (चित्तिम्) ज्ञान (सुभगत्वम्) सब प्रकार का उत्तम ऐश्वर्य, (रयीणाम्) धनों की (पोषम्) बढ़ती (तनूनाम्) शरीरों की (अरिष्टिम्) आरोग्यता (वाचः) वाणी की (स्वाद्मानम्) मधुरता और (अह्नाम्) दिनों का (सुदिनत्वम्) सुख पूर्वक बीतना (धेहि) दो ।

भावार्थ—हे दयामय जगत्पिता परमात्मन्! हमको कृपा करके श्रेष्ठ धन दो। जिस ज्ञान से हमें सब प्रकार का बल प्राप्त हो सके वैसा ज्ञान हमको दो। सब प्रकार का उत्तम से उत्तम ऐश्वर्य प्रदान करो। भगवन्! आपके पुत्र हम लोगों के धनों की वृद्धि, शरीरों की आरोग्यता, वाणी की मधुरता, दिनों का सुख से बीतना दो। यह सब पदार्थ प्रसन्न होकर, आप अपने प्रेमी भक्तों को प्रदान करते हैं। इसलिए अपने प्रेम का भी हमें दान दो ॥ ५९ ॥

अहमिन्द्रो न परा जिग्य इद्धनं न मृत्यवेऽवतस्थे कदाचन। सोममिन्मा सुन्वन्तो याचता वसु न मे पूरवः सख्ये रिषाथन ॥

॥६०॥ १०।४८।५॥

पदार्थ—(अहम् इन्द्रः) मैं सब धन का स्वामी हूँ मेरे (धनम्) धन का (इत्) निश्चय से (न परा जिग्ये) पराजय नहीं होता। (कदाचन) मैं कभी (मृत्यवे) मृत्यु के लिये (न अवतस्थे) नहीं ठहरता अर्थात् मैं अमर हूँ। हे (पूरवः) मनुष्यो ! (मा) मेरे लिये (सोमम्) यज्ञ को (इत्) निश्चय से (सुन्वन्तः) करते हुए (वसु याचत) धन की याचना करो (मे सख्ये) मेरी मित्रता में (न रिपाथन) तुम नष्ट भ्रष्ट नहीं होवोगे।

भावार्थ—परम दयालु जगदीश पिता हम सब को उपदेश करते हैं। हे मेरे प्यारे पुत्रो मनुष्यो ! मैं सब धन का स्वामी हूँ मेरे धन को कोई छीन नहीं सकता, और मैं अमर हूँ, मृत्यु मुझे नहीं मार सकता। आप

लोग मेरी प्रसन्नता के लिये, यज्ञादि वेद विहित उत्तम कर्मों को करते हुए, धन की प्रार्थना करो, मैं आपकी कामना को पूर्ण करूँगा। आप यह बात निश्चित जान लो कि, जो मेरा भक्त मेरी प्रसन्नता के लिये, यज्ञ तप दान वेदादि सच्छास्त्रों का स्वाध्यायादि करता हुआ, मेरे साथ मित्रता करता है, उसका कभी नाश नहीं होता, किन्तु वह उत्तम गति को ही प्राप्त होता है ॥ ६० ॥

इन्द्रो॑ या॒तोऽव॑सितस्य॒ राजा॒ शम॑स्य च शृ॒ङ्गिणो॒ वज्र॑बाहुः। सेदु॒ राजा॑ क्षयति चर्षणी॒नाम॒रान्न ने॒मिः परि॒ता ब॑भूव ॥६१॥

१।३२।१५॥

पदार्थ—(वज्रबाहुः इन्द्रः) प्रबल भुजाओं

वाला इन्द्र (यातः) जङ्गम (अवसितस्य) स्थावर (शमस्य) शान्त (च) और (शृङ्गिणः) सींग वाले लड़ाके प्राणियों का भी (राजा) राजा है (स इत् उ) निश्चित वही (चर्पणी- नाम्) सब मनुष्यों पर (क्षयति) शासन करता है (न) जैसे (नेमिः) पहिये की धार (अरान्) पहिये के आरों को (परि बभूव) घेरे हुए है ऐसे ही (ता) उन सब चर अचर को वही राजा (परि बभूव) घेरे हुए है ।

भावार्थ—वह प्रबल राजा इन्द्र, स्थावर जंगम शान्त और लड़ाके प्राणियों पर भी शासन कर रहा है । जैसे रथचक्र की धार, सब अरों को घेरे हुए है ऐसे ही वह इन्द्र जगत् के जड़ चेतन प्राणी अप्राणी सब को

घेरे हुए हैं। उस इन्द्र के शासन में ही सब मनुष्य पशु पक्षी वर्त्तमान हैं उसके शासन का कोई उल्लंघन नहीं कर सकता ॥६१॥

न किरस्य शचीनां नियन्ता सूनृतानाम्।
न किर्वक्ता न दादिति ॥६२॥ ८।३२।१५॥

पदार्थ—(अस्य) इस इन्द्र की (शचीनाम्) शक्तियों का (सूनृतानाम्) सच्ची और मीठी वाणियों का (नियन्ता) नियन्ता (न किः) नहीं है (न दात् इति) इन्द्र ने मुझे नहीं दिया ऐसा (वक्ता) कहने वाला (न किः) कोई नहीं है।

भावार्थ—उस भगवान् इन्द्र की शक्तियों का और उसकी सत्य और मीठी वाणियों का नियम बाँधने वाला कोई नहीं है। और

यह कोई नहीं कह सकता कि इन्द्र ने मुझे कुछ नहीं दिया, क्योंकि सब को सब कुछ देने वाला वह इन्द्र ही है ॥ ६२ ॥

इन्द्रश्च मृळयाति नो न नः पश्चादघं नशत्।

भद्रं भवाति नः पुरः ॥६३॥२।४१।११॥

पदार्थ—(इन्द्रः च) परमात्मा ही (नः) हम पर (मृडयाति) दया करे (नः पश्चात्) हमारे पीछे से (अघम्) पाप (न नशत्) प्राप्त न हो किन्तु (नः पुरः) हमारे सम्मुख (भद्रम् भवाति) अच्छा कर्म और उसका फल भद्र हो।

भावार्थ—पूर्ण ऐश्वर्ययुक्त परमेश्वर, अपनी अपार दया से हमें सुखी करे। हमारे आगे, पीछे कहीं भी दुःख का नाम न हो, जिधर

भी देखें सुख ही सुख हो, कल्याण की वर्षा होती हुई दिखाई देवे ॥६३॥

इन्द्र आशाभ्यस्परि सर्वाभ्यो अभयं करत्।
जेता शत्रून् विचर्षणिः ॥६४॥ २।४१।१२॥

पदार्थ—(इन्द्रः) परमेश्वर (शत्रून् जेता) जो प्रजा पीड़कों का जीतने वाला और (विचर्षणिः) सब को पृथक् पृथक् देखने वाला है (सर्वाभ्य आशाभ्यः) हमें सब दिशाओं से और (परि) सब ओर से (अभयम् करत्) निर्भय करे।

भावार्थ—हे सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर ! जिस २ दिशा से और जिस २ कारण से हमें भय प्राप्त होने लगे, उस २ दिशा से और उस २ कारण से हमें निर्भय करें। भगवन् ! आपके प्रेमी भक्तों के जो

शत्रु हैं उन सब को आप भली प्रकार जानते हैं, आप से कोई भी छिपा नहीं। उन हमारी जाति और धर्म के विरोधी बाहिर के शत्रुओं से, और विशेष कर अन्दर के काम क्रोध लोभादि, हमारे घातक शत्रुओं से हमारी रक्षा कीजिये ॥६४॥

इन्द्रं परेऽवरे मध्यमास इन्द्रं यान्तोऽवसितास इन्द्रम्। इन्द्रं क्षियन्त उत युध्यमाना इन्द्रं नरो वाजयन्तो हवन्ते ॥६५॥

४।२५।८॥

पदार्थ—(परे) उच्च श्रेणी के मनुष्य (अवरे) नीच श्रेणी के मनुष्य (मध्यमासः) मध्यम श्रेणी के मनुष्य (इन्द्रम्) इन्द्र को (हवन्ते) बुलाते हैं (यान्तः) मार्ग में चलने वाले

और (अवसिताशः) कर्म करने वाले (इन्द्रम्) इन्द्र को बुलाते हैं (क्षियन्तः) घरों में निवास करने वाले (उत) और (युध्यमानाः) युद्ध करने वाले मनुष्य (वाजयन्तः) धन, अन्न, बल की इच्छा वाले (नरः) सब नर नारी उसी इन्द्र को बुलाते हैं।

भावार्थ—संसार में उच्चकोटि के, नीच कोटि के और मध्यम कोटि के सब मनुष्य, उस सर्वशक्तिमान् जगदीश की प्रार्थना करते हैं। तथा मार्ग में चलने वाले और अपने अपने कर्तव्य कर्मों में लगे हुए, अपने घरों में निवास करते हुए, उस जगत्पति को बुलाते हैं। युद्ध करने वाले वीर पुरुष भी, अपनी विजय चाहते हुए, उस प्रभु को स्मरण करते और बुलाते हैं। किम्बहुना

संसार में धन धान्य बलादि की इच्छा करने वाले सब नर नारी, उस परम पिता के आगे प्रार्थना करते हैं। परमात्मा सब की पुकार को सुनते और उनकी यथायोग्य कामनाओं को पूरा भी करते हैं ॥६५॥

त्वं सोमासि सत्पतिस्त्वं राजोत वृत्रहा।
त्वं भद्रो असि क्रतुः ॥६६॥ १।९१।५॥

पदार्थ—हे (सोम) सकल जगत् उत्पादक और सत्कर्मों में प्रेरक शान्तस्वरूप शान्तिदायक परमात्मन्! (त्वम् सत्पतिः असि) आप सत्पुरुषों का पालन करने वाले हो आप ही सब के (राजा) स्वामी (उत) और (वृत्रहा) मेघों के रचक धारक और मारक हो (त्वम् भद्रः असि) आप कल्याण-

स्वरूप कल्याण कारक और (क्रतुः) सब के कर्ता हो ।

भावार्थ—हे सकल ब्रह्माण्डों के उत्पन्न करने वाले, सत्कर्मों में प्रेरक और शान्ति देने वाले सोम परमात्मन्! आप श्रेष्ठ पुरुषों के पालन करने वाले, सब चर और अचर जगत् के राजा और मेघों के उत्पादक धारक और मारक हो । आप कल्याण स्वरूप, अपने भक्तों का कल्याण करने वाले और सारे जगत् के उत्पन्न करने वाले हो ॥ ६६ ॥

त्वं च सोम नो वशो जीवातुं न मरामहे ।
प्रियस्तोत्रो वनस्पतिः ॥६७॥ १।९१।६॥

पदार्थ—हे (सोम) सत्कर्मों में प्रेरक प्रभो! आप (नः) हमारे (जीवातुम्) जीवन

की (वशः) कामना करने वाले (प्रियस्तोत्रः) और जिनके गुणों का कथन प्रेम उत्पन्न करने वाला है ऐसे (वनस्पतिः) आप अपने भक्तों की और सेवनीय पदार्थों की पालना करने वाले हैं। आपको जान कर (न मरामहे) हम मृत्यु को प्राप्त नहीं होते किन्तु मोक्ष रूपी अमर अवस्था को प्राप्त होते हैं।

भावार्थ—जो मनुष्य परमेश्वर की भक्ति करते और उसकी वैदिक आज्ञा के अनुसार अपना जीवन बनाते हुए, उसके नियमानुकूल चलते हैं, वे पूरी आयु पाते हैं और इस भौतिक देह को त्याग कर मुक्तिधाम को प्राप्त होते हैं।।६७

सोम यास्ते मयोभुव ऊतयः सन्ति दाशुषे।
ताभिर्नोऽविता भव ।।६८।। १।९१।९।।

पदार्थ—हे (सोम) परमेश्वर (ते) आपकी (याः) जो (मयोभुवः) सुख की उत्पन्न करने वाली (ऊतयः) रक्षणादि क्रियाएं (दाशुषे सन्ति) दानी धर्मात्मा मनुष्य के लिये हैं (ताभि) उनसे (नः) हमारे (अविता भव) रक्षा आदि के करने वाले हूजिये।

भावार्थ—हे परमात्मन्! आपका नियम है कि, जो यज्ञ दानादि उत्तम वैदिक कर्म करने वाले धर्मात्मा पुरुष हैं, उनकी आप सदा रक्षा करते हैं। उन रक्षा आदि क्रियाओं से आप हम अपने भक्तों की रक्षा कीजिये॥ ६८॥

सोम॑ गी॒र्भिष्ट्वा॑ व॒यं व॒र्द्धया॑मो वचो॒विदः॑।
सु॒मृ॒ळी॒को न॒ आवि॑श ॥६९॥ १।९१।११॥

पदार्थ—हे सोम ! (वचोविदः) वेद शास्त्रादिकों के वचनों के ज्ञाता (वयम्) हम लोग (गीर्भिः) अनेक स्तुति समूहों से (त्वा) आपको (वर्द्धयामः) बढ़ाते अर्थात् सर्वोपरि विराजमान मानते हैं (सुमृडीकः) उत्तम सुख के दाता आप (नः) हम लोगों को (आविश) प्राप्त होओ ।

भावार्थ—हे वेदवेद्य परमात्मन् ! वेदादि श्रेष्ठ विद्या के ज्ञाता हम लोग, आपकी अनेक पवित्र वेद मन्त्रों से महिमा को गाते हुए, आप सर्वशक्तिमान् सृष्टिकर्त्ता अन्तर्यामी के ध्यान में निमग्न होते हैं। दयामय प्रभो ! हम आपकी कृपा से अपने हृदय में आपको अनुभव करें, जिससे हम लोग सदा सुखी होवें। क्योंकि आपकी वाणी रूपी वेद में

लिखा है 'तमेव विदित्वाऽति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय' अर्थात् उस प्रभु को जान कर ही मनुष्य मृत्यु से पार हो जाता है। मुक्ति के लिये और कोई दूसरा मार्ग नहीं है॥६९

त्वं सो॑म म॒हे भगं॒ त्वं यून॑ ऋता॒यते। दक्षं॑ दधासि जी॒वसे॑ ॥७०॥ १।९१।७॥

पदार्थ—हे सोम ! (त्वम्) आप (ऋतायते) विशेष ज्ञान की इच्छा करनेहारे (महे) महापूज्यगुणयुक्त (यूने) ब्रह्मचर्य्य और विद्या से तरुण अवस्था को प्राप्त हुए ब्रह्मचारी के लिये (भगम्) अनेक प्रकार के ऐश्वर्य को तथा (त्वम्) आप (जीवसे) जीने के लिये (दक्षम्) बल को (दधासि) धारण कराते हैं।

भावार्थ—शान्तिप्रद सोम ! आप, श्रेष्ठ-गुणयुक्त और ब्रह्मचर्यादि साधन सम्पन्न जिज्ञासु अपने भक्त को, अनेक प्रकार का ऐश्वर्य और बहुत काल तक जीने के लिये बल प्रदान करते हो। आपकी भक्ति और ब्रह्मचर्यादि साधनों के विना कोई चिरंजीव नहीं हो सकता, न ही लोक परलोक में सुखी हो सकता है ॥७०॥

त्वं नः सोम विश्वतो रक्षा राजन्नघायतः।
न रिष्येत् त्वावतः सखा ॥७१॥ १।९१।८॥

पदार्थ—हे सोम ! (त्वम्) आप (नः) हमारी (विश्वतः) समस्त (अघायतः) पापी पुरुषों से (रक्ष) रक्षा कीजिये। हे (राजन्) सब की रक्षा का प्रकाश करने

वाले ! (त्वावतः) आपका (सखा) मित्र (न रिष्येत्) कभी नष्ट नहीं होता।

भावार्थ—पुरुषों को इस प्रकार ईश्वर की प्रार्थना करके उत्तम यत्न करना चाहिये कि, जिससे धर्म को छोड़ने और अधर्म के ग्रहण करने की इच्छा भी न उठे। धर्म और अधर्म की प्रवृत्ति में मन की इच्छा ही कारण है। मन को सत्संग स्वाध्याय और प्रभु भक्ति में लगाने से धर्म के त्याग और अधर्म के ग्रहण में इच्छा ही न होगी ॥७१॥

गयस्फानो अमीवहा वसुवित्पुष्टिवर्धनः।
सुमित्रः सोम नो भव ॥७२॥ १।९१।१२॥

पदार्थ—हे सोम ! आप (गयस्फानः) धन, जनपद, प्रजा, सुराज्य के बढ़ाने वाले (अमी-

वहा) सब रोगों के विनाश करने वाले (वसुवित्) पृथिवी आदि वस्तुओं के जानने वाले अर्थात् सर्वज्ञ और विद्या सुवर्णादि धन के दाता (पुष्टिवर्धनः) शरीर, मन इन्द्रिय और आत्मा की पुष्टि को बढ़ाने वाले हैं (नः) हमारे (सुमित्रः) उत्तम मित्र (भव) कृपा करके हूजिये।

भावार्थ—हे सोम! आपकी कृपा के विना पुरुषों को धन विद्या आदि प्राप्त नहीं हो सकते, न ही अनेक प्रकार के रोग नष्ट हो सकते हैं, न ही शरीर मन इन्द्रिय और आत्मा की पुष्टि हो सकती है। इसलिए हम सब को योग्य है कि हम आप परम पूज्य परमात्मा को ही अपना परम प्यारा सच्चा मित्र बनावें, जिस से हम सब का भला हो ॥७२॥

सोम रारन्धि नो हृदि गावो न यवसेष्वा।

मर्य इव स्व ओक्ये ॥७३॥ १।९१।१३॥

पदार्थ—हे (सोम) सुखप्रद ईश्वर! (न) जैसे (गावः) गौएं (यवसेषु) घासादि में रमती हैं और (मर्यः इव) जैसे मनुष्य (स्व ओक्ये) अपने गृह में रमण करता है वैसे (आ) अच्छे प्रकार (नः हृदि) हमारे हृदय में (रारन्धि) रमण करिये।

भावार्थ—हे जगदीश्वर! जैसे गौ आदि पशु अपने खाने योग्य घासादि पदार्थों में उन्माद पूर्वक रमण करते हैं, मनुष्य अपने घरों में आनन्द से रहते हैं। ऐसे ही भगवन्! आप मेरे हृदय में रमण करें, अर्थात् मेरे आत्मा में प्रकाशित हूजिये, जिससे मैं आपको

यथार्थ रूप से जानता हुआ अपने जन्म को सफल बनाऊं ॥७३॥

अस्माँ अवन्तु ते शतमस्मान्त्सहस्रमूतयः ।
अस्मान्विश्वा अभिष्टयः ॥७४॥ ४।३१।१०॥

पदार्थ—हे इन्द्र ! (ते) आपकी (शतम् ऊतयः) सैंकड़ों रक्षायें (अस्मान्) हमारी (अवन्तु) रक्षा करें और (सहस्रम्) हजारों (ऊतयः) रक्षायें (अस्मान् अवन्तु) हमारी रक्षा करें (विश्वा) (सब अभिष्टयः) वाञ्छित पदार्थ (अस्मान् अवन्तु) हमारी रक्षा करें ।

भावार्थ—हे दयामय परमात्मन् ! आपकी सैंकड़ों और हजारों रक्षायें हमारी रक्षा करें भगवन् ! आपके दिए हुए अनेक मनो-

वाञ्छित पदार्थ, हमारी रक्षा करें। ऐसा न हो कि, हम अनेक पदार्थों को प्राप्त होकर, आपसे विमुख हुए, उन पदार्थों से अनेक उपद्रव करके पाप के भागी बन जायें, किन्तु उन पदार्थों को संसार के उपकार में लगाते हुए, आपकी कृपा के पात्र बनें ॥७४॥

सखा॑यो॒ ब्रह्म॑वाहसे॒ऽर्च॑त॒ प्र च॑ गायत।
स हि नः॒ प्रम॑तिर्म॒ही ॥७५॥ ६।४५।४॥

पदार्थ—हे (सखायः) मित्रो! (ब्रह्मवाहसे) वेद और वैदिक ज्ञान को धारण करने वाले तथा उन वेदों को हमारे कानों तक पहुँचाने वाले परमात्मा की (अर्चत) स्तुति प्रार्थना रूप पूजा करो (च) और (प्रगायत) उसी प्रभु का गायन करो (हि)

क्योंकि (सः) वह जगदीश हमारा (प्रमतिः) सच्चा बन्धु है अथवा वह परमात्मा ही हमारी (मही प्रमतिः) बड़ी बुद्धि है।

भावार्थ—हे ज्ञानी मित्रो! जिस जगत्पति परमात्मा ने, हमारे कल्याण के लिये वेदों को रचा, उस ज्ञान को धारण किया, सृष्टि के आरम्भ में चार महर्षियों के अन्तःकरणों में, उन चार वेदों का प्रकाश किया। वही चारों वेद, गुरु परम्परा से हमारे कानों तक पहुँचाये गए, इसलिए हमारा सब का कर्तव्य है, कि हम सब, उस प्रभु की पूजा करें, क्योंकि वही हमारा सच्चा बन्धु है। परमेश्वर परायण होना यही हमारी बड़ी बुद्धि है। प्रभु भक्ति के बिना बुद्धिमान् पण्डित भी महा मूर्ख हैं॥ ७५॥

तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः।
दिवीव चक्षुराततम् ॥७६॥ १।२२।२०॥

पदार्थ—(तत् विष्णोः) उस सर्वव्यापक परमेश्वर के (परमम् पदम्) श्रेष्ठ स्वरूप को (सूरयः) विद्वान् लोग (सदा पश्यन्ति) सदा देखते हैं (दिवि इव) जैसे सब लोग द्युलोक में (आततम्) सर्वत्र व्याप्त (चक्षुः) सूर्य को देखते हैं।

भावार्थ—उस सर्वव्यापक परमात्मा के सर्वोत्तम स्वरूप को, ज्ञानी महात्मा लोग, सदा प्रत्यक्ष रूप से देखते हैं ! जैसे आकाश में सर्वत्र विस्तार पाए हुए, सूर्य को सब लोग प्रत्यक्ष देखते हैं। वैसे ही महानुभाव महात्मा लोग अपने हृदय में उस परमात्मा को प्रत्यक्ष देखते हैं ॥ ७६ ॥

तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते ।
विष्णोर्यत् परमं पदम् ॥७७॥ १।२२।२१॥

पदार्थ—(विष्णो) व्यापक प्रभु का (यत् परमम् पदम्) जो सर्वोत्तम पद है (तत्) उसको (विप्रासः) जो बुद्धिमान् ज्ञानी (विपन्यवः) संसार के व्यवहारी पुरुषों से भिन्न हैं और (जागृवांसः) और जागे हुए हैं (समिन्धते) वे ही अच्छी तरह से प्रकाशित करते अर्थात् साक्षात् जानते हैं ।

भावार्थ—उस सर्वव्यापक विष्णु भगवान् के सर्वोत्तम स्वरूप को, ऐसे विद्वान् ज्ञानी महात्मा सन्तजन ही, जान कर, प्राप्त हो सकते हैं, जो संसारी पुरुषों से भिन्न हैं, और जागरण शील हैं, अर्थात् अज्ञान, संशय,

श्रम आलस्यादि नींद से रहित हैं। सदा उद्यमी वेदादि सद्विद्याओं के अभ्यासी, ज्ञान ध्यान में तत्पर, संसार के विषय भोगों से उपरत, काम क्रोधादि दोषों से रहित, और शान्त हृदय हैं, जिनके सत्संग और सहवास से ज्ञान ध्यान प्रभु भक्ति और शान्ति आदि प्राप्त हो सकें, ऐसे महात्माओं का ही मुमुक्षु जनों को सत्संग और सेवा करनी चाहिए, जिससे पुरुष का लोक और परलोक सुधरे॥७७॥

विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे।
इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥७८॥ १।२२।१९॥

पदार्थ—(विष्णोः) सर्वव्यापक जगत्पति परमात्मा के (कर्माणि) कर्मों को (पश्यत) देखो (यतः) जिससे (व्रतानि) नियमों

को (पस्पशे) मनुष्य प्राप्त होता है (इन्द्रस्य) इन्द्रियों के स्वामी जीव का (युज्यः) वही योग्य (सखा) मित्र है ।

भावार्थ—हे मनुष्यो ! आप लोग उस सर्वव्यापक जगत्पिता के, जगन्निर्माणादि आश्चर्य कर्मों को देखो, और विचारो जो उसने अपने प्रिय पुत्रों के लिए अवश्य-कर्तव्य रूप नियम निश्चित किए हैं उनको देखो । क्योंकि इन्द्रियों के स्वामी जीव का एक वही योग्य मित्र है । वह दयामय प्रभु, जीवात्मा के हित के लिये, अनेक अद्भुत कर्म कर रहा है । उसकी अपार कृपा है ॥७८॥

ऋजुनीती नो वरुणो मित्रो नयतु विद्वान् ।
अर्यमा देवैः सजोषाः ॥७९॥ १।९०।१॥

पदार्थ—(वरुणः) सर्वोत्तम (मित्रः सब से प्रेम करने वाला (विद्वान्) सर्वज्ञ (अर्यमा) न्यायकारी (देवैः सजोषाः) विद्वानों के साथ प्रेम करने वाला परमात्मा (नः) हमको (ऋजुनीती) सरल नीति से (नयतु) चलावे।

भावार्थ—हे महाराजाधिराज परमात्मन्! आप हमको सरल शुद्ध नीति प्राप्त करायें। आप सर्वोत्कृष्ट हैं, हमें श्रेष्ठ विद्या और श्रेष्ठ धनादि प्रदान करके उत्तम बनावें। आप सब के मित्र हैं, हमें भी सब का शुभ-चिन्तक बनावें। आप महाविद्वान् हैं, हमें भी विद्वान् बनायें। आप न्यायकारी हैं, हमें भी धर्मानुसार न्याय करने वाला बनायें, जिससे हम विद्वानों और दिव्य गुणों के साथ प्रीति करने वाले होकर, आपकी

आज्ञा का पालन कर सकें। भगवन्! आप हमारी सदा सहायता करते रहें, जिससे हम सुनीति युक्त होकर सुख से अपना जीवन व्यतीत कर सकें ॥७९॥

तं त्वा शोचिष्ठ दीदिवः सुम्नाय नूनमीमहे सखिभ्यः ॥८०॥ ५।२४।४॥

पदार्थ—हे (शोचिष्ठ) ज्योतिस्वरूप वा पवित्र स्वरूप पवित्र करने वाले परमात्मन्! (दीदिवः) प्रकाशमान् (तम् त्वा) उस सर्वत्र प्रसिद्ध आप से (सुम्नाय) अपने सुख के लिये (सखिभ्यः) मित्रों के लिये (नूनम्) अवश्य (ईमहे) याचना करते हैं।

भावार्थ—हे प्रकाशस्वरूप प्रकाश देने वाले पतितपावन जगदीश! आप से अपने और

अपने मित्रों और बान्धवों के सुख के लिये प्रार्थना करते हैं। हम सब आपके प्यारे पुत्र, आपकी भक्ति में तत्पर हुए इस लोक और परलोक में सदा सुखी रहें। हम पर ऐसी कृपा करो ॥८०॥

त्वं हि विश्वतो मुख विश्वतः परिभूरसि।
अप नः शोशुचदघम् ॥८१॥ १।९७।६॥

पदार्थ—हे (विश्वतोमुख) परमात्मन्! आपका मुख सब दिशाओं में है आप सब ओर देख रहे हैं। आप (विश्वतः) सर्वत्र (परिभूः असि) व्याप्त हैं (नः) हमारे (अघम्) पाप (अप शोशुचत्) सर्वथा विनष्ट हों।

भावार्थ—हे विश्वतोमुख सर्वद्रष्टा परमा-

त्मन् ! आप सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त हैं, अतएव आपका नाम विश्वतोमुख है। आप अपनी सर्वज्ञता से, सब जीवों के हृदय के भावों को और उनके कर्मों को जानते हैं, कोई बात आप से छिपी नहीं। इस लिये हमारी ऐसी प्रार्थना है कि, हमारे सब पाप और पापों के कारण दुष्ट संकल्पों को नष्ट करें। जिससे हम आपके सच्चे ज्ञानी और भक्त बन सकें ॥८१॥

पाहि नो अग्ने रक्षसः पाहि धूर्तेरराव्णः। पाहि रीषत उत वा जिघांसतो बृहद्भानो यविष्ठ्य ॥८२॥ १।३६।१५॥

पदार्थ—हे (बृहद्भानो) सब से बड़े तेजस्विन् (यविष्ठ्य) महाबलिन् (अग्ने)

ज्ञान स्वरूप प्रभो ! (नः) हमें (रक्षसः) राक्षसों से (पाहि) बचाओ (धूर्तः अराव्ण) धूर्त ठग कृपण स्वार्थियों से (पाहि) बचाओ (रीषतः) पीड़ा देने वाले (उत) और (वा) अथवा (जिघांसतः) हनन करने की इच्छा करने वाले से (पाहि) रक्षा करो ।

भावार्थ—हे महाबली तेजस्वी सब के नेता परमात्मन् ! राक्षस धूर्त कृपण कंजूस मक्खी चूस स्वार्थान्ध पुरुषों से हमारी रक्षा कीजिए। और जो दुष्ट, हमें पीड़ा देने वाले तथा जो दुष्ट शत्रु, हमारे नाश की इच्छा करने वाले हैं ऐसे पापी लोगों से हमें सदा बचाओ। हम आपकी कृपा से सुरक्षित होकर, अपना और जगत् का भला कर सकें ॥ ८२ ॥

अग्निं मन्ये पितरमग्निमापिमग्निं भ्रातरं सद-मित्सखायम्। अग्नेरनीकं बृहतः सपर्यं दिवि शुक्रं यजतं सूर्यस्य ॥८३॥ १०।७।३॥

पदार्थ—(अग्निम्) ज्ञानस्वरूप परमात्मा को (पितरम् मन्ये) मैं पिता मानता हूँ (अग्निम् आपिम्) अग्नि को बन्धु (अग्निम् भ्रातरम्) अग्नि को भ्राता और (सदम् इत् सखायम्) सदा का ही मित्र मानता हूँ (बृहतः अग्नेः) इस बड़े अग्नि के (अनीकम्) बलका (सपर्यम्) मैं पूजन करता हूँ। इस अग्नि के प्रभाव से (दिवि) द्युलोक में (सूर्यस्य) सूर्य का (यजतम्) बड़ा पवित्र करने वाला (शुक्रम्) तेज चमक रहा है।

भावार्थ—परमात्मा ही हमारा सब का

सच्चा पिता माता बन्धु भ्राता सदा का मित्रादि सब कुछ है। संसार के पिता मातादि संबन्धी, इस शरीर के रहने तक संबन्धी हैं। इस शरीर के नष्ट होने पर, इस जीव का न कोई सांसारिक पिता है, न कोई माता भ्राता आदि है। सच्चा पिता आदि तो इसका परमात्मा ही है, इसी की ज्योति-रूप बल से द्यु आदि लोकों में सूर्य चन्द्रादि प्रकाश कर रहे हैं। इसी लिए ही, सत्-शास्त्रों में, परमात्मा को ज्योतियों का ज्योति वर्णन किया गया है। परमात्मा की ज्योति के बिना सूर्यादि कुछ भी प्रकाश नहीं कर सकते, इसलिए आओ! भ्रातृगण हम सब उस ज्योतियों के ज्योति, जगत्पिता परमात्मा की प्रेम से स्तुति प्रार्थना उपासना करें, जिससे हमारा कल्याण हो॥८३॥

आ सूर्ये न रश्मयो ध्रुवासो वैश्वानरे दधिरेऽग्ना वसूनि । या पर्वतेष्वोषधीष्वप्सु या मानुषेष्वसि तस्य राजा ॥८४॥
१।५९।३॥

पदार्थ—(सूर्ये) सूर्य में (न) जैसे (रश्मयः) किरणें (ध्रुवासः) स्थिर हैं ऐसे (वैश्वानरे) सब के नेता (अग्नौ) अग्नि में (वसूनि) सब ओर से सब धन अटल रहते हैं (या पर्वतेषु) जो धन पर्वतों में (अप्सु) जलों में (ओषधीषु) ओषधियों में (या मानुषेषु) और मनुष्यों में हैं (तस्य राजा असि) उस सब के आप राजा हैं ।

भावार्थ—हे परमात्मन् ! जो धन महा: तेजस्वी अग्नि में, पर्वतों में, ओषधीवर्ग में,

समुद्रादि जलों में और मनुष्यों के खज़ाने आदिक में स्थित हैं, उस सब धन के आप ही स्वामी हैं। जैसे सूर्य में किरणें अटल होकर रहती है ऐसे ही संसार के सब धन, आप में स्थिर होकर रहते हैं। भगवन्! आप कंगाल को एक क्षण में धनी और धनी को कंगाल बना सकते हैं॥ ८४॥

देवो देवानामसि मित्रो अद्भुतो वसुर्वसूनामसि चारुरध्वरे। शर्मन्त्स्याम तव सप्रथस्तमेऽग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव॥८५

१।९४।१३॥

पदार्थ—हे (अग्ने) ज्ञानस्वरूप परमात्मन्! (देवानाम् देवः) आप विद्वानों के भी परम विद्वान् हो (अद्भुतः मित्रः असि) और

उन विद्वानों के आश्चर्यरूप आनन्द देने वाले मित्र हो। (वसूनाम् वसुः असि) वसुओं के वसु हो (अध्वरे) यज्ञ में (चारुः) अत्यन्त शोभायमान हो (तव) आपकी (सप्रथस्तमे) अति विस्तीर्ण (शर्मन्) सुख-दायक (सख्ये) मित्रता में (वयम्) हम (स्याम) स्थिर रहें और (मा रिषामा) पीड़ित न होवें।

भावार्थ—हे सर्वज्ञ सर्वअन्तर्यामी प्रभो! आप विद्वान् पुरुषों के महाविद्वान् और आश्चर्यकारक सुखदायक सच्चे मित्र हो। लाखों प्राणियों के आधाररूप जो पृथिवी आदि वसु हैं, उन वसुओं के अधिष्ठान-रूप आप वसु हो। भगवन् आप ज्ञान यज्ञादि उत्तम कर्मों में शोभायमान, धार्मिक

और ज्ञानी पुरुषों को शोभा देने वाले हो। आपकी मित्रता बड़ी विस्तृत और सदा आनन्ददायक है। आपकी मित्रता में स्थिर रहते हुए, हम कभी दुःखी नहीं हो सकते। कृपानिधे हम यही चाहते हैं कि, हम आपको ही सच्चा सुखदायक मित्र जानकर आपकी प्रेम भक्ति में लगे रहें॥ ८५॥

इळा सरस्वती मही तिस्रो देवीर्मयोभुवः।
बर्हिः सीदन्त्वस्रिधः॥८६॥ १।१३।९॥

पदार्थ—(इडा) वाणी (सरस्वती) विद्या (मही) मातृ भूमि (मयोभवः) कल्याण करने वाली और (अस्रिधः) कभी हानि न पहुंचाने वाली (तिस्रः देवीः) तीन देवियां (बर्हिः) हमारे अन्तःकरण में (सीदन्तु) विराजमान हों।

भावार्थ—प्रभु से प्रार्थना है कि दयामय परमात्मन्! हमारे देश वासियों में इन तीन देवियों की भक्ति हो। १ इडा, अपनी मातृ भापा भापियों के साथ मातृ भापा में वात-चीत करना। २ लोक, परलोक, जड़, चेतन, पुण्य, पाप, हित, अहित, कर्तव्य, अकर्तव्य को बताने वाली सच्ची विद्या सरस्वती। ३ मही अपनी जन्मभूमि और अपनी जन्मभूमि के वासी अपने वान्धवों से प्रेम। यह तीन देवियां मनुष्य को सदा सुख देने वाली हैं, कभी हानि करने वाली नहीं हैं। हर एक मनुष्य के अन्तःकरण में, इन तीन देवियों के प्रति भक्ति होनी चाहिये। जिस देश के वासियों की इन तीन देवियों में प्रीति होगी, वह देश उन्नत होगा। जिस देश में इन तीन

देवियों में भक्ति नहीं है, जिनका अपनी भाषा और विद्या से प्रेम नहीं, अपनी मातृभूमि और मातृभूमि में बसने वालों से प्रेम नहीं, वह देश अवनति के गढ़े में पड़ा रहेगा ॥ ८६ ॥

तवोतिभिः सचमाना अरिष्टा बृहस्पते मघवानः सुवीराः । ये अश्वदा उत वा सन्ति गोदा ये वस्त्रदाः सुभगास्तेषु रायः ॥८७॥
५।४२।८॥

पदार्थ—हे (बृहस्पते) सूर्य चन्द्रादि सब लोक लोकान्तरों के स्वामिन् ! (ये तव ऊतिभिः) जो आपकी रक्षाओं के साथ (सचमानाः) सम्बन्ध रखने वाले हैं वे (अरिष्टाः) दुःखों से रहित (मघवानः) धनवान् और (सुवीराः) अच्छे पुत्रादि

सन्तान वाले होते हैं (ये अश्वदाः) जो घोड़ों का दान करने वाले हैं (उत वा) और (सन्ति गोदाः) गौओं के दाता और (ये वस्त्रदाः) जो वस्त्रों का दान करते हैं वे (सुभगाः) सौभाग्य वाले हैं (तेषु रायः) उनके ही घरों में अनेक प्रकार के धन और सब ऐश्वर्य रहते हैं।

भावार्थ—हे सर्व ब्रह्माण्डों के स्वामिन्! परमात्मन्! जो धर्मात्मा आपके सच्चे प्रेमी भक्त हैं, उनकी आप सब प्रकार से रक्षा करते हैं। वे सब प्रकार के दुःख और कष्टों से रहित हो जाते हैं, धनवान् और सुपुत्रादि सन्तान वाले होते हैं, और धन-वान् होकर भी, सब पापों से रहित होते हैं। उस धन को उत्तम महात्माओं का अन्न-

वस्त्रादिकों से सत्कार करने में खर्च करते हैं, और धार्मिक संस्थाओं में, वेदवक्ता महानुभावों के वास करने के लिए, अनेक सुन्दर स्थान बनवा देते हैं, जिनमें रह कर महात्मा लोग प्रभु की भक्ति करते और वेद-विद्या का प्रचार कर सब को प्रभु का भक्त और वेदानुकूल आचरण करने वाला बनाते हैं। ऐसे धार्मिक पुरुष ही सौभाग्यवान् हैं, ऐसे आचार व्यवहार करने वाले उत्तम पुरुषों के पास ही, बहुत धन धान्य होना चाहिये ॥ ८७ ॥

अस्य हि स्वयंशस्तरं सवितुः कच्चन प्रियम् । न मिनन्ति स्वराज्यम् ॥८८॥ ५।८२।२॥

पदार्थ—(अस्य सवितुः) इस जगत्

उत्पादक परमेश्वर के (स्व यशस्तरम्) अपने यश से फैले हुए (प्रियम्) प्रेम करने योग्य (स्वराज्यम्) अपने राज्य का (कश्चन) कोई भी (न भिनन्ति) नाश नहीं कर सकते।

भावार्थ—सृष्टि रचना कर्ता परमेश्वर का स्वराज्य सारे संसार में फैला हुआ है और वह स्वराज्य प्रभु के बल और यश से फैला है। उसके नियम अटल हैं, और सब के प्रीति करने योग्य हैं। उस जगत् कर्ता के सृष्टि नियमों को और स्वराज्य को कोई नाश नहीं कर सकता। वास्तव में अविनाशी परमात्मा का स्वराज्य भी अविनश्वर है। मनुष्य तो मर्त्य अर्थात् मरण धर्मा हैं इस मनुष्य का राज्य भी नाशवान् है, कदापि अविनाशी नहीं हो सकता ॥८८॥

मधु वाता ऋतायते मधुं क्षरन्ति सिन्धवः।
माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः ॥८९॥ १।९०।६॥

पदार्थ—(ऋतायते) सत्याचरण वाले पुरुष के लिये (वाताः) वायुगण (मधु-क्षरन्ति) मधु वर्षण करती हैं (सिन्धवः) सब नदियां (मधु क्षरन्ति) मधु बरसाती हैं, (नः) हम उपासकों के लिये . (ओषधीः) गेहूँ चावल चना.आदि सब अन्न (माध्वीः सन्तु) मधुरता युक्त होवें।

भावार्थ—हे परमात्मन्! जैसे सदाचारी पुरुष के लिये सब प्रकार के वायु और सब नदियां सुखदायिनी होती हैं. ऐसे ही आपके उपासक जो हम लोग हैं, उन के लिये भी सब प्रकार के वायु और सब नदियां सुखप्रद

हों, जिससे हम सब लोग, आपकी भक्ति और आपकी आज्ञारूप वैदिक धर्म का सर्वत्र प्रचार कर सकें ॥८९॥

मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवं रजः ।
मधु द्यौरस्तु नः पिता ॥९०॥ १।९०।७॥

पदार्थ—(नक्तम् मधु) हमारे लिये रात्रि मधु हो (उत) और (उषसः) प्रातःकाल मधु हों (पार्थिवम् रजः) पृथिवी के ग्राम नगरादि (मधुमत्) माधुर्य युक्त हों (नः) हमारे लिये (पिता) बरसात करने से हमारा सब का पालन करने वाला (द्यौः) द्युलोक (मधु अस्तु) मधुवत् सुखप्रद हो ।

भावार्थ—हे जगत्पिता परमात्मन्! हमारे लिए, सब रात्रि और प्रातःकाल मधुवत सुख-

दायक हों। सब नगर ग्राम गृहादि भी सुख-जनक हों। यह ऊपर का द्युलोक, जो बरसात द्वारा हम सब का पालक होने से पिता रूप है वह भी सुख देने वाला हो॥९०॥

स्वस्तये वायुमुप॑ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुव॑नस्य यस्पतिः। बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः॥

॥९१॥५।५१।१२॥

पदार्थ—(वायुम्) अनन्त बलवान् परमेश्वर का (स्वस्तये) कल्याण के लिए (उपब्रवामहे) हम विशेष रूप से कथन करें (सोमम्) सकल जगत् के उत्पादक और सत्कर्मों में प्रेरक प्रभु का (स्वस्ति) आनन्द के लिए कथन करें (यः) जो (भुव-

नस्य पतिः) जगत् का पालक है (बृहस्पतिम्) बड़े २ सूर्यादि लोकों का वा वेदवाणी का रक्षक (सर्वगणम्) सब की गणना करने वाले जगदीश्वर का (स्वस्तये) कल्याण की प्राप्ति के लिए कथन करें (आदित्यासः) अविनाशी परमेश्वर के भक्त (नः स्वस्तये) हमारे आनन्द के लिए (भवन्तु) सदा वर्तमान रहें।

भावार्थ—हे अनन्त बलवान् परमैश्वर्ययुक्त सत्कर्मों में प्रेरक ब्रह्माण्डों के और वेदवाणी के रक्षक सब की गिनती करने वाले सर्वशक्तिमान् जगत्पिता परमात्मन्! आपकी हम जिज्ञासु लोग, वारंवार स्तुति और प्रार्थना करते हैं, कृपा करके हमारा इस लोक और परलोक में सदा कल्याण करें।

भगवन्! आपके भक्त जो वेदविद्या के ज्ञाता और सब का कल्याण चाहने वाले शान्तात्मा महात्मा हैं, वे भी हमें ब्रह्मविद्या का उपदेश दे कर, हमारा कल्याण करने वाले हों॥९१॥

स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताऽघ्नता जानता संगमेमहि॥९२॥
५।५१।१५॥

पदार्थ—(स्वस्ति पन्थाम्) कल्याणप्रद मार्ग पर (अनुचरेम) हम चलते रहें (सूर्याचन्द्रमसौ इव) जैसे सूर्य और चन्द्रमा चल रहे हैं (पुनः) वारंवार (ददता) दान कर्ता (अघ्नता) किसी की भी हिंसा न करने वाले तथा (जानता) सब को सब प्रकार से जानने वाले परमात्मा के (संगमेमहि)

संग को हम प्राप्त हों, अर्थात् प्रभु के सच्चे ज्ञानी भक्त बनें।

भावार्थ—हे परमात्मन्! हम पर कृपा करके प्रेरणा करो कि हम लोग कल्याणप्रद मार्ग पर चलें। जैसे सूर्य और चन्द्रमा प्रकाश और सबका पालन पोषण करते हुए, जगत् का उपकार कर रहे हैं। ऐसे हम भी अज्ञान अन्धकार का नाश करते हुए जगत् के उपकार करने में लग जायें। भगवन्! आप महादानी सब के रक्षक महाज्ञानी हो, ऐसे आपसे हमारा पूर्ण प्रेम हो। और आपके प्यारे जो महा पुरुष सन्तजन हैं, जो परम उदार, किसी प्राणी की भी हिंसा न करने वाले, वेद शास्त्र उपनिषदों के ज्ञाता विद्वान् ब्रह्मज्ञानी और आपके सच्चे प्रेमी हैं, उन

महानुभाव महात्माओं का हमें सत्संग दो, जिस से हम, आप के ज्ञानी और सच्चे प्रेमी भक्त बनकर, अपने जन्म को सफल करें॥९२

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥९३॥

१।८९।५॥

पदार्थ—(वयम्) हम लोग (अवसे) अपनी रक्षा के लिये (तम्) उस (ईशानम्) ईश्वर की जो (जगतःतस्थुषः पतिम्) जंगम और स्थावर का स्वामी (धियम् जिन्वम्) बुद्धि का प्रेरक है उसकी (हूमहे) प्रार्थना करते हैं वह (पूषा) पोषक ईश्वर (नः) हमारे (वेदसामवृधे) धनों की वृद्धि के

लिये (असत्) होवे तथा (अदब्धः) किसी से न दबने वाला (स्वस्तये) हमारे कल्याण के लिये (रक्षिता) रक्षक और (पायुः) पालक (असत्) होवे ।

भावार्थ—सब चर और अचर के स्वामी परमेश्वर की, हम प्रार्थना उपासना करते हैं, कि वह हमारी बुद्धियों को शुभ मार्ग में लगावे । और हमारे तन धन की रक्षा करे, हमारे कल्याण का रक्षक तथा पालक हो । क्योंकि उस प्रभु की कृपा दृष्टि के बिना, न हमारा तन और धन सुरक्षित हो सकता है, और न ही हमें कल्याण प्राप्त हो सकता है । इस लिये इस लोक और परलोक में कल्याण प्राप्ति के लिये, उस जगत् पति परमात्मा की हम लोग प्रार्थना उपासना करते हैं ॥९३॥

विश्वे॑ दे॒वा नो॑ अ॒द्या स्व॒स्तये॑ वैश्वान॒रो वसु॑-
र॒ग्निः स्व॒स्तये॑। दे॒वा अ॑वन्त्वृ॒भवः॑ स्व॒स्तये॑
स्व॒स्ति नो॑ रु॒द्रः पा॒त्वंह॑सः ॥ ९४ ॥

५।५१।१३॥

पदार्थ—(अद्य) आज (विश्वे देवाः) सब दिव्य शक्ति वाले पदार्थ (नः) हमारे (स्वस्तये) सुख के लिये हों (वैश्वानरः) सब मनुष्यों का हितकारी (वसुः) सबका अधिष्ठान (अग्निः) सर्वव्यापक ज्ञानस्वरूप परमात्मा (नः स्वस्तये) हमारे सुख के लिये हो (देवाः) बिजली (ऋभवः) बुद्धिमान् लोग (स्वस्तये) सुख के लिये (अवन्तु) रक्षा करें (रुद्रः) पापियों को दण्ड देकर रुलाने वाला ईश्वर (नः स्वस्तये) हमारे

सुख के लिये (अंहसः पातु) पाप कर्म से
बचा कर हमारी रक्षा करे।

भावार्थ—हे सब मनुष्यों के हितकर्ता
ज्ञान स्वरूप सर्वव्यापक प्रभो! जितने दिव्य-
शक्ति वाले पदार्थ हैं, वे सब आपकी कृपा
से हमें अब सुखदायक हों। सब ज्ञानी लोग
हमारे कल्याणकारक हों। जिन ज्ञानी और
आपके भक्त महात्माओं के सत्सङ्ग से,
हमारा जन्म सफल हो सके, और जिनकी
प्राप्ति, आपकी कृपादृष्टि के बिना नहीं हो
सकती, ऐसे महापुरुष हमारा कल्याण करें।
भगवन्! पापी लोगों को उनके सुधार के
लिये उनके पापों का फल आप दण्ड देते
हैं। हम पर कृपा करके उन पापों से हमें
बचावें और हमारा कल्याण करें॥ ९४॥

श्रद्धां देवा यजमाना वायुगोपा उपासते ।
श्रद्धां हृदय्यया३कूत्या श्रद्धया विन्दते वसु
॥९५॥ १०।१५१।४॥

पदार्थ—(यजमानाः देवाः) यज्ञादि उत्तम कर्मों के करने वाले विद्वान् जिनका (वायु-गोपाः) अनन्त बल वाला परमात्मा रक्षक है। (श्रद्धाम्) वेदोक्त धर्म में और वेदों के ज्ञाता महात्माओं के वचनों में विश्वास का (उपासते) सेवन करते हैं। (हृदय्या आकूत्या) मनुष्य अपने हृदय के शुद्ध संकल्प से (श्रद्धाम्) श्रद्धा को और (श्रद्धया) श्रद्धा से (वसु विन्दते) धन को प्राप्त होता है।

भावार्थ—श्रेष्ठ कर्म करने वाले जिनकी सदा प्रभु रक्षा करता है, ऐसे विद्वान् पुरुष

वेदों में और वेदोक्त धर्म में तथा वेदज्ञ महात्माओं के वचनों में दृढ़ विश्वास करते हैं। पुरुष अपने पवित्र हृदय के भाव से श्रद्धा को और श्रद्धा से धन को प्राप्त होता है। श्रद्धा के बिना कोई भी श्रेष्ठ कर्म नहीं हो सकता। जिनकी वेदों में और अपने माननीय आचार्यों में श्रद्धा नहीं, ऐसे नास्तिक कोई अच्छा धर्म कर्म नहीं कर सकते। श्रेष्ठ धर्म कर्म और ब्रह्म ज्ञान के बिना यह दुर्लभ मनुष्यदेह व्यर्थ हो जाता है। इस लिये ऐसे नास्तिक भाव को अपने मन में कभी आने नहीं देना चाहिये ॥ ९५ ॥

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्॥
॥९६॥ ७।५९।१२॥

पदार्थ—(त्र्यम्बकम्) तीनों काल में एकरस ज्ञानयुक्त, अथवा तीनों लोकों का जनक अथवा जगत् की उत्पत्ति स्थिति प्रलय इन तीनों के कर्त्ता परमात्मा (सुगन्धिम्) बड़े यशवाले (पुष्टिवर्धनम्) शरीर आत्मा और समाज के बल को बढ़ाने वाले जगदीश की (यजामहे) स्तुति करते हैं। हे प्रभो ! (उर्वारुकम् इव) जैसे पका हुआ खरबूजा (बन्धनात्) लता बन्धन से छूट जाता है वैसे ही (मृत्योः) मृत्यु से (मुक्षीय) हम छूट जावें। (अमृतात् मा) मोक्षरूप सुख से न छूटें।

भावार्थ—हे जगत् उत्पत्ति स्थिति प्रलयकर्ता परमात्मन् ! आपका यश सब जगत् में व्याप रहा है, आपही अपने भक्तों के शरीर आत्मा और समाज के बल को बढ़ाने वाले

हैं। भगवन्! जैसे पका हुआ खरबूजा, अपने लता बन्धन से छूट जाता है। ऐसे ही मैं भी मृत्यु के बन्धन दुःख से छूट जाऊँ, किन्तु मुक्ति से कभी अलग न होऊँ। आप की कृपा से मुक्ति सुख को अनुभव करता हुआ सदा आनन्द में मग्न रहूं ॥९६॥

त्वं विश्वस्य मेधिर दिवश्च ग्मश्च राजसि।
स यामनि प्रति श्रुधि ॥९७॥ १।२५।२०॥

पदार्थ—हे (मेधिर) मेधाविन् वरुण! (त्वम् विश्वस्य) आप सब जगत् के (राजसि) प्रकाशक और राजा स्वामी हैं (दिवः च) द्युलोक के (ग्मः च) और भूलोक के भी स्वामी हैं (सः) वह आप (यामनि) बुलाने पर (प्रतिश्रुधि) हमारी प्रार्थना को सुनें।

भावार्थ—हे बुद्धिमान् सर्वोत्तम प्रभो! आप सारे जगत् के द्युलोक के प्रकाश करने वाले और सब पृथिवी के स्वामी हैं। दयामय! जब हम आपकी प्रेमपूर्वक प्रार्थना करें, तब आप सुनकर हमें सदा प्रेमी भक्त बनावें, जिससे हमारा कल्याण हो ॥९७॥

ते स्याम देव वरुण ते मित्र सूरिभिः सह।
इषं स्वश्च धीमहि ॥९८॥ ७।६६।९॥

पदार्थ—हे (वरुण देव) अति श्रेष्ठ स्वीकरणीय देव! (ते स्याम) हम आप के ही होवें (मित्र) हे सबसे प्रेम करने वाले मित्र! (सूरिभिः सह) विद्वानों के साथ आपके उपासक होवें (इषम्) अभिलषित धन धान्य (स्वः च) प्रकाश और नित्य सुख को (धीमहि) प्राप्त होवें।

भावार्थ—हे परमात्म देव ! हम पर कृपा करें कि हम, आपके ही प्रेमी भक्त स्तुतिगायक और माननेवाले होवें। केवल हम ही नहीं किन्तु, विद्वानों और बान्धव मित्रों के साथ, हम आपके प्रेमी भक्त होवें। भगवन्। आप की कृपा से हम, धन धान्य और ज्ञान को प्राप्त होकर नित्य सुख को भी प्राप्त करें ॥९८॥

शं नो अज एकपाद् देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः। शं नो अपां नपात् पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपाः ॥९९॥

७।३५।१३॥

पदार्थ—(अजः) अजन्मा (एकपात्) एक पगवाला अर्थात् एकरस व्यापक (देवः) प्रकाशस्वरू सुखप्रद (न शम्) हमें

शान्ति दायक (अस्तु) हो (अहिः) जिस की हिंसा न कर सकें, निर्विकार (बुध्न्यः) आदि कारण (शम् समुद्रः) सबका सींचने वाला परमेश्वर हमें शान्ति दायक हो (अपाम्) प्रजाओं का (नपात्) न गिराने वाला, (पेरुः) पार लगाने वाला जगत्पति (नः शम्) हमें शान्ति दायक (अस्तु) हो (पृश्निः) सबका स्पर्श करने वाला (देवगोपाः) विद्वान् महात्माओं का रक्षक (नः शम् भवतु) हमें शान्तिदायक हो ।

भावार्थ—कभी भी जन्म न लेने वाला सदा एकरस व्यापक देव प्रभु हमें शान्ति प्रदान करे । जिस भगवान् की कभी कोई हिंसा नहीं कर सकते, ऐसा वह निर्विकार, सब का आदि मूलकारण और सबको हरा

भरा रखने वाला, हमें सुखदायक हो। सब प्रजाओं का रक्षक सब का उद्धार करनेवाला सर्वव्यापक, विद्वान् महात्माओं का सदा रक्षक, हमें शान्ति प्रदान करे ॥९९॥

शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्य्यमा।
शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो विष्णुरुरुक्रमः॥
॥१००॥ १।९०।९॥

पदार्थ—(मित्रः) सबसे स्नेह करने वाला परमात्मा (नः) हमारे लिए (शम्) शान्ति दायक हो (वरुणः) सर्व उत्तम प्रभु (शम्) शान्तिदायक हो (अर्यमा) यम, न्यायकारी जगत्पति (नः) हमारे लिये (शम्) सुख-दायक हो (इन्द्रः) परम ऐश्वर्य वाला महा-बली जगदीश (नः शम्) हमारे लिये कल्याण-

दाता हो (बृहस्पतिः) बड़े बड़े सूर्य चन्द्रादि-कों का और वेदवाणी का स्वामी परमेश्वर, हमारे लिये कल्याणकारी हो (उरुक्रमः) महाबली (विष्णुः) सर्वव्यापक अन्तर्यामी परमात्मा (नः शम्) हमें बल देकर सदा सुखी बनावे ।

भावार्थ—मित्र, वरुण, अर्य्यमा, इन्द्र, बृह-स्पति विष्णु आदि जिस परमात्मा के अनन्त नाम हैं, ये सब सार्थक हैं, निरर्थक एक भी नहीं । अनन्त शक्ति, अनन्त गुण और अनन्त ही ज्ञानवाले जगत्पिता में सर्व जगत् का उत्पन्न करना, अपने सब भक्तों को ज्ञान और शान्ति देकर, उन का लोक परलोक सुधारना इत्यादि सब घट सकते हैं ॥१००॥

॥ ओ३म् शांतिश्शांतिश्शांतिः ॥